Con. 3. VII.1.48
350

अंक 7
संख्या 1–20

बृहस्पतिवार
4 नवम्बर
सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर 1
प्रतिज्ञा-ग्रहण 1
राष्ट्रपिता को श्रद्धांजलि 1
कायदे आजम मोहम्मद अली जिन्ना, श्री डी.पी. खेतान और
श्री डी.एस. गुरंग की मृत्यु पर शोक-प्रकाश 2
नियमों में संशोधन 2
कार्यक्रम 33
विधान के मसौदे पर प्रस्ताव 59

भारतीय विधान-परिषद्

बृहस्पतिवार, 4 नवम्बर, सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक प्रातः ग्यारह बजे कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में समवेत हुई। माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद अध्यक्ष पद पर आसीन थे।

परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्यों ने परिचय-पत्र पेश किये और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

(1) श्री एच. सिद्धवीराप्पा (मैसूर)
(2) श्री के.ए. मोहम्मद (त्रावणकोर)
(3) श्री आर. शंकर (त्रावणकोर)
(4) श्री अमृतलाल विट्ठलदास ठक्कर (सौराष्ट्र)
(5) श्री कालूराम विरूलकर (मध्य भारत)
(6) श्री राधावल्लभ विजयवर्गीय (मध्य भारत)
(7) श्री रामचन्द्र उपाध्याय (मत्स्य संघ)
(8) श्री राज बहादुर (मत्स्य संघ)
(9) ठाकुर कृष्णसिंह (अवशिष्ट राज्य)
(10) श्री वी. रमय्या (मद्रास राज्य)
(11) डा वाई.एस. परमार (हिमाचल प्रदेश)

प्रतिज्ञा ग्रहण

निम्नलिखित सदस्य ने केवल प्रतिज्ञा ग्रहण की

राय बहादुर श्यामानन्दन सहाय

राष्ट्रपिता को श्रद्धांजलि

***अध्यक्ष:** माननीय सदस्यों, अपने कार्यक्रम को आरम्भ करने के पहले मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप राष्ट्रपिता के प्रति श्रद्धांजलि अर्पण करने के लिये अपनी जगहों में उठ खड़े हों। उन्होंने हमारे मृतप्राय अस्थि-चर्ममय देह को अनुप्राणित

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[अध्यक्ष]

किया, हमें निराशा के अंधकार से निकाल कर आशा और सफलता का प्रकाश दिखाया और हमारे दासत्व का अन्त करके हमें स्वतन्त्र कर दिया। (*हर्षध्वनि*) उनकी आत्मा निरन्तर हमारा पथप्रदर्शन करती रहे। उनका जीवन तथा उनके उपदेश हमारे लक्ष्य-प्राप्ति के मार्ग में ज्योतिस्वरूप हों।

(*सब सदस्य शांतिपूर्वक खड़े हो गये।*)

कायदे आज़म मोहम्मद अली जिन्ना, श्री डी.पी. खेतान और श्री डी.एस. गुरंग की मृत्यु पर शोक-प्रकाश

***अध्यक्ष:** सदस्यों, मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप कायदे-आज़म मोहम्मद अली जिन्ना के प्रति आदर प्रकट करने के लिये अपनी जगहों में उठ खड़े हों। उन्होंने दृढ़ निश्चय और अटल निष्ठा से पाकिस्तान की बुनियाद डाली तथा उसकी स्थापना की और उनकी मृत्यु से इस समय सभी को ऐसी क्षति हुई है, जिसकी पूर्ति नहीं हो सकती। हम सरहद के उस पार अपने भाइयों के प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हैं।

(*सब सदस्य शांतिपूर्वक खड़े हो गये।*)

***अध्यक्ष:** जब से विधान-परिषद् विधान-निर्माण के कार्य को सम्पन्न करने के लिये सम्मिलित हुई, दो सदस्यों की मृत्यु हो गई है। वे श्री देवीप्रसाद खेतान और दार्जिलिंग के श्री डाग्वरसिंह गुरंग हैं। उन्होंने अपने निर्वाचन-क्षेत्रों का बड़ी निष्ठा के साथ प्रतिनिधित्व किया और हमारे विचार-विमर्श में भी बहुत सहायता दी। मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप उनके प्रति आदर प्रकट करने के लिये अपनी जगहों में उठ खड़े हों।

(*सब सदस्य शांतिपूर्वक खड़े हो गये।*)

विधान-परिषद् के नियम 5ए और 5बी में संशोधन

***अध्यक्ष:** अब हम कार्यावलि में दिये हुए विषयों पर विचार शुरू करेंगे। पहला विषय श्री गोविन्द मेनन और श्रीमती दुर्गाबाई का प्रस्ताव है, जिसकी सूचना मिल चुकी है। मैं श्रीमती दुर्गाबाई से उसे उपस्थित करने के लिये कहता हूं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान् मैं इसे उपस्थित करती हूं:

यह कि विधान-परिषद् की अधिसूचना संख्या सी.ए/43/एसईआर/48-1, ता. 2-8-1948 ई. में उल्लिखित प्रावधान ता. 2-8-1948 ई. से विधान-परिषद् के नियमों के अंग बना लिये जायें जैसा कि निम्नलिखित संशोधनों का आशय है:

(1) **नियम 5-ए और 5-बी:** नियम 5-ए और 5-बी के स्थान में निम्नलिखित नियम रखा जाय:

"5-ए When a vacancy occurs by reason of death, resignation or otherwise in the office of a member of the Assembly representing an Indian State or more than one Indian State specified in column 1 of the Annexure to the Schedule to these rules, the President shall notify the vacancy and make a request in writing to the authority specified in the corresponding entry in column 3 of that Annexure to proceed to fill the vacancy as soon as may reasonably be practicable by election or by nomination, as the case may be, in the case of the States specified in Part I of the said Annexure, and by election in the case of the States specified in Part II of that Annexure:

Provided that in the case of the States specified in Part I of the said Annexure, where the seat was filled previously by nomination, the vacancy may be filled by election:

Provided further that in making a request to fill a vacancy by election under this rule, the President may also request that the election be completed within such time as may be specified by him."

(2) नियम 51 में: नियम 51 के खण्ड (बी) की जगह निम्नलिखित खण्ड रखा जाय:

"(बी) 'Returned candidate' means a candidate whose name has been published in the appropriate Official Gazette as a duly elected member of the Assembly and includes a candidate

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

whose name has been reported to the President in the manner provided in paragraph 5 of the Schedule to these rules as a duly chosen representative of any Indian State or States specified in column 1 of the Annexure to that Schedule."

(3) अनुसूची में: 3, 4, 5 और 6 पैरों की जगह निम्नलिखित पैरे रखे जायें:

"3. (1) When the representation allotted to the States, individual or grouped in the Assembly, or the grouping of the States for the purpose of such representation is altered by an order made under paragraph 2, or by an amendment of the Annexure to this Schedule, the President may, by order–

(ए) reassign members representing a State or States to such State or States as may be specified in the order;

(बी) declare the seat or seats of any member or members of the Assembly representing any State or States affected by an order under paragraph 2 or an amendment of the Annexure to this Schedule, as the case may be, to be vacant.

(2) Any member who has been reassigned to a State or States by an order made under clause (a) of sub paragraph (1) and whose seat has not been declared vacant under clause (b) of that sub-paragraph shall as from the date of the order be deemed to be a duly chosen representative of such State or States.

(3) A member whose seat is declared vacant by an order made under clause (b) of sub-paragraph (1) shall, if it is so specified in the order, continue to hold office as member of the Assembly until his successor has been duly elected and has taken his seat in the Assembly.

4. (1) Not less than fifty per cent of the total representatives of the States specified in column 1 of Part I of the Annexure to this Schedule in the Assembly shall be elected by the elected members of the legislatures of the States concerned, or where such legislature do not exist, by the members of electoral colleges constituted in accordance with the provisions made in this behalf by the authorities specified in the corresponding entries in column 3 of the Part.

(2) All vacancies in the seats in the Assembly allotted to the States specified in column 1 of Part II of the Annexure to this Schedule shall be filled by election and the representatives of such States to be chosen to fill such seats shall be elected by the elected members of the legislatures of the States concerned, or where such legislatures do not exist, by the members of electoral colleges constituted in accordance with the provisions made in this behalf by the authorities specified in the corresponding entries in column 3 of that Part.

5. On the completion of the election or nomination, as the case may be, of the representative or representatives of any State or States specified in column 1 of the Annexure to this Schedule in the Constituent Assembly, the authority mentioned in the corresponding entry in column 3 of that Annexure shall make a notificaton under his signature and the seal of his offices stating the name or names of the person or persons so elected or nominated and cause it to be communicated to the President of the Assembly.''

श्रीमान्, सभा से अपना प्रस्ताव स्वीकार करने की सिफारिश करने के पहले मैं कुछ शब्द इस बात का स्पष्टीकरण करने के लिये कहना चाहती हूं कि नियमों में ये संशोधन क्यों और कैसे आवश्यक हो गये हैं।

श्रीमान्, विधान-परिषद् के नियम 5ए और 5बी में किसी एक या एक से अधिक भारतीय राज्यों के सदस्य का स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त हो जाने पर उसकी पूर्ति के लिये प्रणाली निर्धारित की गई हैं और नियमों के परिशिष्ट में विभिन्न राज्य या राज्यों के समूहों के बीच जगहों के बंटवारे तथा राज्यों के

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

प्रतिनिधियों को चुनने की प्रणाली और निर्वाचन के संचालनार्थ संचालकों को नियुक्ति की प्रणाली निश्चित की गई है। नरेन्द्र-मंडल और विधान-परिषद् ने जो दो निगोशियेटिंग कमेटियां नियुक्त की थीं, उनके निर्णय ही नियम 5ए और 5बी के आधार हैं।

श्रीमान्, जैसा कि सब को विदित है, तब से इन राज्यों के वैधानिक तथा शासन प्रबंध के स्वरूप में बहुत से प्रभावपूर्ण परिवर्तन हो गये हैं। उदाहरणार्थ कुछ राज्य संघों के रूप में संगठित हो गये हैं, कुछ निकटवर्ती प्रांतों में समाविष्ट हो गये हैं और कुछ ने केन्द्र द्वारा शासित क्षेत्रों का रूप ग्रहण कर लिया है।

श्रीमान्, इन परिवर्तनों का विधान-परिषद् में प्रतिनिधित्व की वर्तमान प्रणाली पर बहुत प्रभाव पड़ा है। इसके फलस्वरूप यह आवश्यक हो गया कि इन बहुत से राज्यों को नये समूहों के रूप में संगठित किया जाये और उनके बीच फिर से जगहें बांटी जायें तथा निर्वाचनों के संचालनार्थ संचालकों को भी बदला जाय और विधान-परिषद् के नियमों में भी आवश्यक परिवर्तन किये जायें। इन सब बातों पर माननीय अध्यक्ष महोदय, राज्यों के माननीय मंत्री तथा सम्बन्धित संघों और राज्यों के प्रधान मंत्रियों और जिन प्रांतों पर इन परिवर्तनों का प्रभाव पड़ेगा, उनके प्रधान मंत्रियों तथा विधान-परिषद् के सचिवालय और स्टेट्स मिनिस्ट्री के कर्मचारियों की बैठक में विचार किया गया और उसके निर्णय, उन प्रावधानों में निहित हैं, जिनको विधान-परिषद् के नियमों में सम्मिलित करने के लिये यह प्रस्ताव है।

श्रीमान्, इन प्रावधानों में किये जाने वाले इन परिवर्तनों में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि राज्यों के नवनिर्मित समूहों या संघों के सम्बन्ध में—कच्छ और जूनागढ़ का भी इस सभा में पृथक-पृथक प्रतिनिधित्व हो गया है—सब रिक्त स्थानों की पूर्ति निर्वाचन द्वारा होगी, जिसमें रियासतों की विधायित्री सभाओं के निर्वाचित सदस्य, या जहां विधायित्री सभाएं न हों, वहां किसी ऐसे निर्वाचक निकाय के सदस्य, जो इस काम के लिये बनाया गया हो, भाग लेंगे।

पुराने निमयों के अनुसार कुछ रिक्त स्थानों की पूर्ति मनोनीतकरण द्वारा हो सकती थी। श्रीमान्, चूंकि आप इन विभिन्न परिवर्तनों की ओर ध्यान दे चुके है। मेरे विचार से, मुझे इन पर विस्तार से बोलने की आवश्यकता नहीं है। मैं इस सभा से सिफारिश करती हूं कि वह मेरे प्रस्ताव को स्वीकार कर ले।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव उपस्थित करती हूं।

अध्यक्षः मेरे पास इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में कुछ संशोधनों की सूचना भेजी गई है। श्री कामत।

***श्री एच.वी. कामतः** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल) अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव करता हूं:

> ''That in sub-para (1) of the proposed paragraph 3 of the Schedule, for the words 'to the states, individual or grouped in the Assembly' the words, 'in the Assembly to the states, individual or grouped' be substituted.''

अर्थात् यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाये, तो प्रस्ताव इस प्रकार हो जायेगा। इस समय तो वह इस प्रकार है: ''When the representation allotted to the States, individual or grouped in the Assembly.'' इसकी जगह वह इस प्रकार हो जायेगा ''When the representation allotted in the Asembly to the States, individual or grouped.....'' मेरे विचार से मुझे इस संशोधन पर अधिक बोलने की आवश्यकता नहीं है। यह स्वत: स्पष्ट है और इस पैरा से जिस आशय को प्रकट करने की चेष्टा की गई है, वह मेरे संशोधन से प्रकट हो जाता है। इसमें कोई भी सन्देह नहीं कि राज्यों का वर्तमान एकाकी या सामूहिक स्वरूप परिषद् के प्रयोजनार्थ नहीं है। इसलिये वह इस प्रकार होना चाहिये: ''Representation allotted in the Assembly to the States, individual or grouped.'' यह पहला संशोधन है।

श्रीमान्, दूसरा संशोधन इस प्रकार है:

> ''That in sub para (3) of the proposed paragraph 3 of the Schedule, for the words 'is declared vacant' the words 'has been declared vacant' be substituted.''

[श्री एच.वी. कामत]

यह संशोधन, मैं कहूंगा, केवल भाषा सम्बन्धी है। मेरे विचार से इसका सम्बन्ध उन दशाओं से है जो स्थान रिक्त होने पर उत्पन्न होंगी। यह शब्दावली: ''When a seat has been declared vacant'', अधिक उपयुक्त होगी।

इसलिये मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि मेरे ये संशोधन स्वीकार कर लिये जायें।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पर बोलना चाहता हूं। क्या मैं बोल सकता हूं?

***अध्यक्ष:** जी, हां।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान्, मेरी बहिन माननीय श्रीमती दुर्गाबाई के प्रस्ताव से जो बातें उत्पन्न हुई हैं, उनमें से कुछ के सम्बन्ध में मैं स्पष्टीकरण चाहता हूं। श्रीमान्, इस सभा की पूर्ण सदस्य-संख्या 324 है, परन्तु मुझे बताया गया है कि आजकल इसकी वास्तविक सदस्य-संख्या 303 है। वे 21 सदस्य, जो हैदराबाद, काश्मीर और भोपाल का प्रतिनिधित्व करेंगे, यहां उपस्थित नहीं हैं। अवशिष्ट 303 के सम्बन्ध में भी कल समाचार-पत्रों में यह समाचार प्रकाशित हुआ कि पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य-संघ ने इस सभा के लिये अपने प्रतिनिधि निर्वाचित नहीं किये हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि कम से कम विधान-परिषद् के इस अन्तिम और सबसे महत्वपूर्ण अधिवेशन में इन राज्यों या राज्य-संघों या राज्य-समूहों का प्रतिनिधित्व क्यों न हो। मैं यह मानता हूं कि काश्मीर के सम्बन्ध में कठिनाइयां हैं। हैदराबाद तो अब उन राज्यों में से एक है, जो परिशिष्ट के भाग 1 में वर्णित है और इन राज्यों में उसका स्थान सर्वप्रथम है। मेरी समझ में नहीं आता कि हम हैदराबाद के नरेश से क्यों न कहें कि वे इस प्रस्ताव के प्रावधानों के अनुसार प्रतिनिधियों को चुनें या मनोनीत करें, जैसी भी दशा हो, और उन्हें शीघ्र से शीघ्र इस अधिवेशन में भाग लेने के लिये भेजें। हाल की सुखद घटनाओं को दृष्टि में रखते हुए—मैं आशा करता हूं कि इस सभा के सदस्य मेरे साथ सहमत होंगे कि हैदराबाद की समस्या सुखद रूप से हल हो गई—हम इस सभा में हैदराबाद के अपने मित्रों का, अपने सहकारियों का, शीघ्र से शीघ्र स्वागत करना चाहते हैं।

जहां तक भोपाल का सम्बन्ध है, मेरी समझ में नहीं आता कि इस सभा में भाग लेने के लिये उसके रास्ते में ऐसे कौन से अड़ंगे हैं, जो दूर नहीं किये जा सकते। मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि भोपाल के अधिकारियों से भी कहा जाये कि वे तुरन्त ही अपने सदस्यों को इस सभा में भेजें।

अब श्रीमान्, कल समाचार-पत्रों में पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य-संघ के सम्बन्ध में जो समाचार प्रकाशित हुआ है, यह स्पष्ट नहीं है। इसमें वहां के नरेश और वहां के शासन के विरुद्ध कई प्रकार की बातें कही गई हैं। परन्तु सच्चाई कुछ भी क्यों न हो, अब समय आ गया है कि इस पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य-संघ को यह आदेश दिया जाये कि वे विधान-परिषद् के इस अन्तिम अधिवेशन में अपने प्रतिनिधियों को भेजें।

मैं आपका ध्यान एक और बात की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। अपने पिछले अधिवेशनों में जो नियम हमने बनाये हैं, उनमें नियम 5 के उपनियम (2) में हमने कहा है:

> ''Upon the occurrence of a vacancy the President shall ordinarily make a request in writing to the Speaker of the Provincial Legislative Assembly concerned or as the case may be, to the President of the Coorg Legislative Council, for the election of a person, for the purpose of filling the vacancy as soon as may reasonably be practicable.''

अब इस सम्बन्ध में परिशिष्ट के भाग 1 में दिये हुए राज्यों में से कुछ के बारे में मुझे खेद है कि मैं अनायास ही यह नहीं बता सकता कि किन राज्यों में निर्वाचित विधान-मण्डल हैं—जैसे उदाहरणार्थ, मैसूर राज्य के सम्बन्ध में, जो कि एक बड़ा राज्य है और इस सभा में अपने प्रतिनिधि भेज चुका है, तथा इसी प्रकार के राज्यों के सम्बन्ध में मेरे विचार से कोई कारण नहीं है कि भविष्य में नरेश के बजाय असेम्बली के अध्यक्ष से खाली जगहों को भरने के लिये प्रार्थना न की जाये, इसके विरुद्ध यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि जिस रूप में नियम 5ए रखा गया है, उसमें यही प्रावधान है कि नरेश ही को इसका अधिकार है। परन्तु चूंकि हम नियमों में संशोधन कर रहे हैं, इन नियमों के कुछ प्रावधान को भी इस प्रकार संशोधित क्यों न किया जाये कि वे जनतंत्रीय व्यवहार और

[श्री एच.वी. कामत]

जनतंत्रीय परम्पराओं के अनुरूप हो जायें? इसलिये मैं अपनी बहिन श्रीमती दुर्गाबाई से प्रार्थना करूंगा कि वे इस बात को स्पष्ट करें कि उन राज्यों के सम्बन्ध में जहां असेम्बलियां काम कर रही है, नरेश के स्थान में वहां की असेम्बलियों के अध्यक्ष अथवा प्रधान को ऐसा करने का अधिकारी क्यों न समझा जाये! इस सम्बन्ध में मैं प्रस्ताविका महोदया से कुछ अधिक प्रकाश चाहता हूं।

श्रीमान्, अपनी जगह पर जाने से पहले मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि इस प्रस्ताव पर मेरे दोनों संशोधन स्वीकार कर लिये जायें। श्रीमान्, मैं आपको धन्यवाद देता हूं।

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा!

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरा संशोधन इस प्रकार है:

> ''That in sub-para (1) of the proposed paragraph 4 of the Schedule, delete the words 'Not less than fifty per cent of' and for the words 'the total representatives' be substituted.''

मेरे संशोधन का उद्देश्य यह है कि चूंकि अपने विधान में हमने मनोनीतकरण की प्रथा का अंत कर दिया है, इसलिये यह उचित नहीं है कि राज्यों को और विशेषतया नरेशों को यह अधिकार हो कि वे 50 प्रतिशत लोगों का मनोनीतकरण करें। इसी उद्देश्य को दृष्टि में रखते हुए और मनोनीतकरण का अन्त करने के अपने निर्णय के अनुसार ही मैंने इस प्रथा का अन्त करने का सुझाव किया है। परन्तु मुझे ज्ञात हुआ है कि नरेशों और उनके राज्यों के लोगों के बीच यह समझौता हो गया है कि यही व्यवस्था रखी जाये और यह कि इसके होते हुए भी सभी प्रतिनिधि प्रजा द्वारा ही चुने जाते हैं। यदि यह सच है, जैसा कि मुझे ज्ञात हुआ है, तो मैं अपने संशोधन को उपस्थित नहीं करता हूं।

अध्यक्ष: आप संशोधन उपस्थित कर रहे हैं या नहीं?

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, मैं उसे उपस्थित नहीं करता हूं।

***अध्यक्षः** इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में मुझे जितने भी संशोधनों की सूचना मिली थी, वे सब उपस्थित किये जा चुके हैं। मेरे पास एक सदस्य से शिकायत आई है कि कार्यावलि और संशोधनों की प्रतियां यही वितरित हुई हैं और उन्हें वे पहले नहीं मिली। इस कारण वे अपने संशोधनों की सूचना नहीं दे सके और इसलिये चाहते हैं कि बहस स्थगित की जाये। मुझे सचिवालय से ज्ञात हुआ है कि कार्यावलि और अन्य पत्र कुछ दिन पहले भेजे गये थे, परन्तु वे उन्हीं पतों में भेजे गये थे जो दफ्तर को मालूम थे। यह संभव है कि कुछ सदस्यों के पास न पहुंच पाये हों और सावधानी के लिए एक दूसरी प्रति यहां दी गई है। ऐसी बात नहीं है कि कार्यावलि और पत्र भेजे नहीं गये हैं। यहां आज दूसरी प्रति दी गई है। मेरे विचार से इस प्रस्ताव पर बहस स्थगित करने के लिये कोई कारण नहीं है; विशेषतया इसलिये कि यह प्रस्ताव बहुत कुछ रस्मी प्रस्ताव है, चूंकि हमने इस समय तक इन नियमों के अनुसार कार्य संचालन किया है और जब सभा का यह अधिवेशन समाप्त हो जायेगा, तो इस प्रकार की संभावना नहीं कि इन नियमों को कार्य में लाया जाये।

श्री मोहनलाल गौतम (संयुक्त प्रान्त : जनरल): जो आपने हुक्म दिया है, उसके मानने में मुझे कोई ऐतराज नहीं है। लेकिन मैं यह अर्ज करना चाहता हूं कि आपकी जो इत्तिला दफ्तर से दी गई है, वह गलत है। एजेंडा अभी तक बहुत से मेम्बरों को नहीं मिला। मुझको ही नहीं, दो-तीन जो मेरे साथी बैठे हुए हैं, उनको भी एजेंडा नहीं मिला और मेरा तो टेलीफोन भी कट गया, लेकिन साल भर का रुपया यहां से वह ले चुके हैं। डिप्टी मिनिस्टर से दो बार मैं कह चुका हूं कि टेलीफोन अभी तक नहीं लगा। यहां मैं जब आया, तो मैंने दूसरी जगह से जाकर टेलीफोन किया और डिप्टी सेक्रेटरी कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली को इत्तिला दी कि वह एजेंडा मुझे अभी तक नहीं मिला और टेलीफोन भी अभी तक नहीं मिला। यह हालत इस वक्त आपके मेम्बरों की है, जो मैं प्रोटेस्ट करना चाहता हूं। और मैं यह कहना चाहता हूं कि मैं अगर अकेला हूं, तब आप इसको ऐसा कर सकते हैं। लेकिन मेरे साथी कई मेम्बर्स ऐसे बैठे हुए है, जिनको एजेंडा नहीं मिला और जिसमें कि आपके डिप्टी मिनिस्टर श्री खुर्शीदलाल भी हैं और

[श्री मोहनलाल गौतम]

वह भी कहते हैं कि उनको एजेंडा नहीं मिला। मैं नहीं जानता हूं कि किस तरह से बांटा गया। उनको भी न मिलने की शिकायत है। मैंने दो मर्तबा उनसे कहा है कि अभी तक टेलीफोन नहीं लगा, हालांकि सालभर का रुपया ले चुके हैं। यह हालत आपने मेम्बरों की कर रखी है। सिर्फ मुझे ही यह शिकायत नहीं है, एजेंडा कइयों को नहीं मिला है और चूंकि काफी इम्पोरटेंट रूल्स हैं, इसलिए मैं प्रोटेस्ट करता हूं कि इनको पोस्टपोन कर दिया जाये।

अध्यक्षः एजेंडा दफ्तर से मेम्बरों के पास भेजा गया है, मेम्बरों को पहुंचे या न पहुंचे, इसकी जवाबदेही खुर्शीदलाल जी देंगे। टेलीफोन की जवाबदेही भी सारी उन्हीं पर है। मैं समझता हूं कि इसका ऐडजोर्न करने की कोई खास वजह नहीं है। अगर कोई मेम्बर इसके बारे में कहना चाहे, तो कह सकते हैं।

श्री हुसैन इमाम (बिहार : मुस्लिम): मैं यह सजैस्ट करना चाहता हूं कि आपको अख्तियार है कि जो अभी भी अमेंडमेंट भेंजे, उनको आप कबूल करें। इससे कोई शिकायत नहीं रह जायेगी।

अध्यक्षः अभी तक मेरे पास कोई अमेंडमेंट नहीं आया है। इसलिए यह सवाल नहीं उठता।

श्री श्यामानन्दन सहाय (बिहार : जनरल): सभापतिजी, एक अर्ज यह करनी थी कि जो अमेन्डमेंट पेश किए गए हैं, अगर उन पर गौर करने की जरूरत हो तो किया जाए। मगर पहले मूल प्रस्तावक को एक अवसर देना चाहिए कि संशोधन को मंजूर करे या उस पर कुछ रोशनी डाले। बाद इसके दूसरों को मौका देना चाहिये कि तरमीम पर अपनी राय जाहिर करें।

अध्यक्षः मेरे पास कोई अमेंडमेंट रहते, तो उनको यहां पेश करने की इजाजत देता। मगर कोई अमेंडमेंट आया नहीं है। अब आप चाहते हैं कि इस बहस को मुल्तवी कर दिया जाये, इसलिए ताकि अमेंडमेंड को आने का मौका दिया जाये। अभी तक कोई अमेंडमेंट मेरे सामने नहीं है।

श्री श्यामानन्दन सहायः सभापति जी, इसके मुतल्लिक यह अर्ज करना है कि आप जो हुक्म देते हैं, वह सब पर लागू है। अगर रास्ते में एजेंडा रह गया है, तो गरज़ तो एजेंडा भेजने से यह है कि मेम्बर उसको पढ़ सकें और उस पर अपनी राय दे सकें। अगर किसी भी गलती से वह मेम्बर तक न पहुंच सके, या असेम्बली के दफ्तर से भेजने में देरी या गलती हो जाये और अगर किसी को एजेंडा नहीं मिला हो, तो मेरे ख्याल में यह मामला गौर तलब है कि प्रस्ताव आज लिया जाये या नहीं और मैं इसकी तरफ आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं।

अध्यक्षः मैं इस वक्त इसे जरूरी नहीं समझता, क्योंकि ऐसे सवाल हमारे सामने दरपेश नहीं हैं, जिसके लिए बहुत बहस की गुंजाइश हो और जिसके लिए हम बहस को मुल्तवी करके दूसरे दिन के लिए काम को रोक दें।

***डा. पंजाबराव शामराव देशमुख** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे वह शिकायत तो नहीं करनी है, जो इस सभा के कुछ माननीय सदस्यों ने की है, परन्तु मैं यह कहूंगा कि मुझे कार्यावलि कल ही मिली और यही कारण था कि अपने स्टेनोग्राफर के न पहुंचने के कारण मैं कई नियमों के सम्बन्ध में अपने संशोधन न भेज सका। यह स्पष्ट है कि नियम काफी लम्बे हैं और इसलिए संशोधन भी इसी प्रकार के होंगे। इसलिए मुझे आशा है कि आप मुझे अपने संशोधन न भेज सकने के लिये क्षमा करेंगे और जिन थोड़े से संशोधनों को मैं उपस्थित करूंगा, उन पर माननीय प्रस्ताविका विचार करेंगी। मेरा पहला संशोधन इस प्रकार है:

> ''In the first part of Rule 5-A instead of 'an Indian State or more than one Indian State' substitute the words, 'one or more Indian State'.''

मेरा अपना विचार यह है कि अंग्रेजी में यह इस प्रकार अच्छा रहेगा। मेरा दूसरा संशोधन इस प्रकार है:

> ''Instead of the words 'make a request' the word 'direct' be substituted.''

[डॉ. पंजाबराव शामराव देशमुख]

श्रीमान्, उस परिशिष्ट के तीसरे स्तम्भ में तत्सम्बन्धी प्रविष्टि में वर्णित अधिकारियों को निर्देश करना आपके लिये संभव होना चाहिये। मेरे विचार से यह बात आपके पद और विधान-परिषद् की प्रतिष्ठा को ध्यान में रखते हुये मैं यह उचित नहीं समझता कि किसी छोटे राज्य से या वहां के प्राधिकारियों से वहां चुनाव कराने के लिये प्रार्थना करने की आवश्यकता हो। विधान-परिषद् के सदस्यों की हैसियत से उपस्थित होने के लिये आप हमें आदेश भेजते हैं। इसलिये मेरा सुझाव है कि उपरोक्त संशोधन स्वीकार कर लिया जाये।

दूसरे परादिक में भी इस प्रकार के शब्द आये हैं। उसमें भी 'request' शब्द आया है। उसकी जगह भी 'direct' शब्द रख देना चाहिये।

दूसरे परादिक के सम्बन्ध में मेरा एक और संशोधन है। मेरा सुझाव है कि इस परादिक के सम्बन्ध में यह रखा जाये:

> 'Provided further that in directing to proceed to fill a vacancy by election under this Rule, the President may also direct that the election be completed by a certain date.''

"making a request to fill'' शब्दों की जगह ''directing to proceed to fill'' शब्दों के रखे जाने का सुझाव है। शब्द ''request'' की जगह शब्द ''direct'' रख दिया गया है और अन्त के शब्द ''within such time as may be specified by him'' की जगह ''by a certain date'' शब्द रखने का प्रस्ताव है।

पृष्ठ दो के पैरा 3 (1) की शब्दावली यदि निम्न रूप में रखी जाये, तो उसका पाठ अच्छा हो जायेगा:

> ''When the representation allotted to any States, jointly or individually in the Assembly or the grouping of the States for the purpose of such representation is altered by an order made under paragraph 2, or by an amendment of the Annexure to this Schedule, the President may by order...''

परिवर्तन यह होगा कि ''the'' शब्द की जगह ''any'' शब्द आ जायेगा और ''individual or grouped in the Assembly'' शब्द निकल जायेंगे, और उनकी जगह केवल ''jointly or individually'' शब्द आ जायेंगे।

मेरा यह संशोधन श्री कामत के संशोधन के समान ही है। मेरे विचार से वे खण्ड में पूर्णतया परिवर्तन करने में हिचक रहे थे। इसीलिये उनके सुझाव से उद्देश्य उतना स्पष्ट नहीं होगा, जितना कि मेरे सुझाव से। श्रीमान्, मुझे आशा है कि प्रस्ताविका महोदया मेरे संशोधनों पर विचार करेंगी और यदि सम्भव होगा, तो उन्हें स्वीकार करेंगी।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा): जनरल): श्रीमान्, मैंने अभी एक संशोधन की सूचना दी है। उसको उपस्थित करने के पूर्व मैं आज जैसी स्थिति है, उसे स्पष्ट करना चाहता हूं।

परिशिष्ट के भाग 1 में मयूरभंज के उल्लेख के साथ यह भी उल्लेख है कि उसका एक प्रतिनिधि होगा और निर्वाचन-फल-प्रेषक वहां का नरेश होगा, परन्तु स्टेट्स मिनिस्ट्री ने यह निश्चय किया है कि मयूरभंज राज्य अकेला नहीं रह सकता और यह समझौता हो गया है कि वह तेईस अन्य राज्यों के समान, जो इससे पूर्व ही विलय हो चुके हैं, उड़ीसा प्रांत में विलय हो जायेगा।

***अध्यक्ष:** क्या मयूरभंज राज्य विलय हो गया है, या अभी इस बात का केवल प्रस्ताव है?

***श्री विश्वनाथ दास:** मेरा विश्वास है कि उन्होंने एक समझौते के पत्र पर हस्ताक्षर किये हैं और वे राज्य को भारत सरकार को सौंप देने वाले हैं, तथा वहां के लिये एक प्रशासक नियुक्त हो चुका है और वह राज्य का कार्य-भार संभालने वाला है। इस स्थिति में मेरा विश्वास है कि मयूरभंज राज्य को अलग समझने और वहां के नरेश को निर्वाचन-फल-प्रेषक समझने के लिये कोई न्यायसंगत कारण नहीं हैं। मुझे यह मालूम नहीं है और मैं यह कह भी नहीं सकता कि भारत सरकार ने उड़ीसा सरकार को वास्तव में यह सूचना दी भी है, या नहीं कि उड़ीसा में मयूरभंज राज्य का विलयन होना है। परन्तु मैं आपको और आपके द्वारा विधान-परिषद् के माननीय सदस्यों को यह आश्वासन देना चाहता हूं कि भारत सरकार यह विचार प्रगट कर चुकी है कि मयूरभंज को उड़ीसा में विलय कर दिया जायेगा। इसलिये इसमें कोई अर्थ नहीं है कि इस सभा में कोई ऐसी बात की जाये, जिससे स्टेट मिनिस्ट्री ने जो काम या निश्चय मयूरभंज राज्य, वहां के लोगों और उड़ीसा प्रांत की पूरी रजामंदी से किया है, वह निष्फल हो जाये।

[श्री विश्वनाथ दास]

इसलिये श्रीमान्, मैंने अभी जिस संशोधन की सूचना दी, उसे मैं उपस्थित करता हूं, वह इस प्रकार है:

''Omit Mayurbhanj with its representation of one and the Ruler of Mayurbhanj as the Returning Officer from Part 1 of the Annexure.''

मैं यह भी उपस्थित करता हूं:

''That the State of Mayurbhanj be added to the Orissa States in Part II of the said Annexure, substituting 24 for 23 and also under the column of representation substituting 5 for 4, including 1 from the State of Mayurbhanj, and the Governor of Orissa to continue as the Returning Officer.''

यही मेरा पूर्ण संशोधन है, जिसे मैं विधान-परिषद् के सदस्यों के सम्मुख रख रहा हूं और मेरा विचार है कि ऐसा करना आवश्यक है।

यदि आप मयूरभंज का पृथक आस्तित्व तथा पृथक प्रतिनिधित्व स्वीकार करते हैं, तो इसका अर्थ यह है कि आप छोटे-छोटे राज्यों को बनाये रखना चाहते हैं। इस नीति का स्टेट्स मिनिस्ट्री और भारत सरकार ने खंडन किया है और इसे स्वीकार नहीं किया है। इसलिये मेरा संशोधन उसी विचार को व्यवहार में लाने के लिये है, जिसे स्टेट्स मिनिस्ट्री तथा भारत-शासन, सिद्धांत तथा कार्य रूप में स्वीकार-व्यक्त कर चुके हैं और जिस पर वे अग्रसर हो चुके हैं।

***अध्यक्ष:** मैं सदस्यों का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूं कि राज्यों की समस्या अब तक परिवर्तनशील रही है। प्रतिदिन इतने परिवर्तन होते रहे हैं कि यह बात संभव नहीं कि प्रत्येक परिवर्तन के होते ही उसको जान लिया जाये। यह प्रस्ताव स्टेट्स मिनिस्ट्री की सिफारिशों पर आधारित है और उस सम्मेलन में निश्चित हुआ, जिसमें सभी सम्बन्धित प्रान्तों के प्रधान मंत्री तथा सभी राज्यों के प्रधान मंत्री ही नहीं, बल्कि राज-प्रमुख भी वर्तमान थे और स्टेट्स मिनिस्ट्री और विधान-परिषद् के प्रतिनिधि भी उपस्थित थे और यह प्रस्ताव उस सम्मेलन की

सिफारिशों के अनुरूप ही है। यदि तब से कोई परिवर्तन हुए हैं, तो हमें उनकी सूचना नहीं है। इसके अतिरिक्त यदि कोई परिवर्तन हो भी गया हो, तो बाद में इन नियमों में परिवर्तन करने में कोई कठिनाई न होगी। इसलिये मैं श्री विश्वनाथ दास को यह बताना चाहता हूं कि वे यह आशंका न करें कि छोटे राज्यों को बनाये रखने का कोई विचार है। इस समय हम उन बातों के आधार पर कार्य कर रहे हैं, जिन्हें हम जानते हैं। हम उन बातों को स्वीकार कर रहे हैं और तदनुसार नियम बना रहे हैं। जैसे ही कि उन बातों में कोई परिवर्तन होगा और हमें उसकी सूचना मिलेगी, हम अपने नियमों में भी तदनुसार परिवर्तन कर लेंगे। इसलिये उनको मैं अपनी यह राय देता हूं कि वे इस समय अपने संशोधन पर जोर न दें। हम इस प्रश्न को उस समय उठा सकते हैं, जब स्टेट्स मिनिस्ट्री हम से यह कहेगी कि इसमें परिवर्तन करना आवश्यक है।

***श्री विश्वनाथ दासः** स्टेट्स मिनिस्ट्री के एक अधिकारी यहां उपस्थित हैं। यही मुख्य बातें हैं। संसार में तो प्रतिदिन परिवर्तन होते रहते हैं; मुझे उन बातों के सम्बन्ध में तिथियां स्मरण नहीं हैं, जिनकी ओर माननीय अध्यक्ष महोदय ने संकेत किया है। मुझे उनके सम्बन्ध में कोई आपत्ति नहीं है, परन्तु मैं उनसे निवेदन करूंगा कि मैंने जो बातें उनके सम्मुख रखी है, उनके सम्बन्ध में वे भी आपत्ति न करें।

***अध्यक्षः** मुझे उनकी बातों के बारे में कोई आपत्ति नहीं है। मैं केवल यह कहता हूं कि मुझे स्टेट्स मिनिस्ट्री से इस सम्बन्ध में कोई सूचना नहीं मिली है। इसलिये जो कुछ भी वह हमें अब तक बता चुकी हैं, उसके आधार पर हम अपना काम आगे बढ़ा रहे हैं। जब हमें सूचना मिलेगी, उस समय नियमों में परिवर्तन करने में कोई कठिनाई न होगी। यह किसी भी बैठक में किया जा सकता है।

***श्री विश्वनाथ दासः** आप इस राज्य को अपने हाथ में ले रहे हैं। जैसे ही समाचार पत्र यह समाचार प्रकाशित करेंगे कि विधान-परिषद् ने इस राज्य का पृथक प्रतिनिधित्व स्वीकार कर लिया है, मैं आप से विश्वासपूर्वक कह सकता हूं कि बहुत बड़ी कठिनाई उत्पन्न हो जायेगी और उसका सामना मुझे या उड़ीसा के लोगों को नहीं, बल्कि उस प्रशासक को करना होगा, जिसे भारत सरकार नियुक्त

[श्री विश्वनाथ दास]

करने जा रही है। इन परिस्थितियों में आपसे, और आपको तो परिस्थिति की विषमता का पूर्ण ज्ञान है तथा उन प्रदेशों की तथा वहां के निवासियों की पूरी जानकारी है, मैं साग्रह प्रार्थना करूंगा कि आप कोई खतरनाक कदम न उठायें। मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देता। मैंने केवल इस विषय की ओर आपका तथा विधान-परिषद् का ध्यान आकर्षित किया है।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से समाचार पत्र केवल यही प्रकाशित न करेंगे कि मयूरभंज को पृथक प्रतिनिधित्व दिया गया है, परन्तु उसके साथ आपका और मेरा वक्तव्य भी प्रकाशित करेंगे। इन वक्तव्यों के साथ इस सूचना का कोई ऐसा प्रभाव नहीं पड़ेगा, जिसका कि आपको भय है और इसलिये मेरी यह राय है कि माननीय सदस्य महोदय अपने संशोधन पर जोर न दें।

श्री राम सहाय (ग्वालियर-इन्दौर : राज्य): अध्यक्ष महोदय, मैं यह मालूम करना चाहता था कि यह अमेडमेंट जो इस वक्त हमारे सामने है, क्या इनमें कोई अमेंडमेंट उन प्रिंसिपल्स के खिलाफ लाया जा सकता है, जो कि निगोशियेटिंग कमेटी में तय हुए थे। मसलन इसमें 50 फीसदी स्वीकार किया गया है। तो क्या 50 फीसदी के अलावा कोई इस किस्म का अमेंडमेंट लाया जा सकता है कि सारे के सारे मेम्बरान इलेक्शन के जरिये से ही आयें, या यह कि जिन्हें राजप्रमुख चुना करे, वह आवें या यह कि पहले स्टेट्स में जो इलेक्टोरल रूल्स तैयार हुए थे, उनके ही मुताबिक चुनकर लाया जा सकता है। मैं इसलिए यह जानना चाहता था कि क्या कोई एक अमेंडमेंट भी लाया जा सकता है कि जो निगोशियेटिंग कमेटी में तय किए हुए मसले से आगे बढ़ कर हो।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से राज्यों के सम्बन्ध में बड़ी सावधानी से काम लेना है। राज्यों से जो समझौते हुए हैं, उनके आधार पर हम आगे बढ़ रहे हैं और हमें इस सभा में कोई ऐसी बात नहीं कहनी चाहिये या कोई ऐसी बात नहीं करनी चाहिये, जिससे यह प्रतीत हो कि इन समझौतों से पीछे हटा जा रहा है। ये सब संशोधन उन समझौतों पर आधारित हैं, जो सम्बन्धित राज्यों और स्टेट्स मिनिस्ट्री के बीच हुए है। सभा को स्मरण होगा कि आरम्भ में एक प्रकार के समझौते

थे, परन्तु चूंकि वे असामयिक हो गये, इसलिए दूसरे प्रकार के समझौते करने पड़े। ये सब संशोधन इन समझौतों पर आधारित हैं, इसलिये मेरी यह राय है कि कोई ऐसा काम न किया जाये, जिससे यह प्रतीत हो कि समझौतों से पीछे हटा जा रहा है।

मैं श्री सिधवा से कहूंगा कि वे अपने संशोधन पर ज़ोर न दें।

***कई माननीय सदस्य:** उन्होंने उसे उपस्थित नहीं किया है।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, मैंने अभी जिस संशोधन की सूचना दी है, उसे मैं सभा की अनुमति से उपस्थित करना चाहता हूं। मैं मौलिक प्रस्ताव से सहमत हूं, परन्तु परिशिष्ट भाग 1 के तीसरे स्तम्भ के सम्बन्ध में (अर्थात् विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुनने के अधिकार के सम्बन्ध में) मैं हैदराबाद, मैसूर, काश्मीर इत्यादि के 'नरेश' शब्द के बारे में एक संशोधन उपस्थित करना चाहता हूं। मैं यह कहना चाहता हूं कि नरेशों को इस समय वास्तविक शासनाधिकार प्राप्त नहीं हैं, क्योंकि अब वह, विशेषत: 15 अगस्त सन् 1947 ई. के बाद, राज्य की जनता के हाथ में दे दिया गया है। इसलिये, श्रीमान्, मेरे विचार से किसी राज्य के नरेश को विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुनने का अधिकारी नहीं बनाना चाहिये; क्योंकि उसे चुनने का अधिकार नहीं है। किसी ऐसे व्यक्ति को अधिकारी कहने से क्या लाभ, जब वह वास्तव में अधिकारी है ही नहीं? मेरे विचार से यह संगत नहीं है। यदि माननीय प्रस्तावक महोदय मेरे संशोधन को स्वीकार कर लें, तो मैं उनको धन्यवाद दूंगा। वह इस प्रकार है:

> ''That for the word 'Ruler' in column 3 of Annexure Part I the word 'people' be substituted.''

यदि आप इसे नियमानुकूल न समझें, परन्तु किसी ऐसी धारा-सभा के अध्यक्ष का स्थान, जिसे कि राज्य के लोगों ने निर्वाचित किया हो, नरेश से अधिक महत्वपूर्ण है, इसमें सन्देह नहीं कि नरेश नाममात्र के लिये छत्रधारी है, वास्तविक शासक या तो राज्य के लोगों द्वारा निर्वाचित प्रधानमंत्री होता है, या जहां कहीं धारा-सभा हो, वहां धारा-सभा का अध्यक्ष होता है। इसलिये, श्रीमान्, मैं माननीय प्रस्ताविका से प्रार्थना करता हूं कि वे इस साधारण संशोधन को स्वीकार कर लें। मैंने एक

[श्री एस. नागप्पा]

सरल संशोधन उपस्थित किया है और मेरे विचार से उसकी अधिक व्याख्या आवश्यक नहीं है मुझे आशा है कि यह सभा कृपा करके इसे स्वीकार कर लेगी।

***अध्यक्ष:** मैं यह बताना चाहता हूं कि माननीय सदस्य महोदय का संशोधन मिथ्या धारणा पर आधारित है। यह बात ठीक नहीं है कि नरेश प्रतिनिधियों का मनोनयन करेगा। सच्चाई केवल यह है कि नरेशों को केवल इस हेतु संबोधित किया जाना है कि वे उन संस्थाओं द्वारा प्रतिनिधियों का चुनाव करायें, जिनको कि इनके चुनने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त चुनाव में और किसी प्रकार से नरेश का हाथ न होगा।

***श्री एस. नागप्पा:** मैं भी यही बात कहना चाहता हूं। आप नरेश को सम्बोधन करते हैं, परन्तु उसे चुनाव का कोई अधिकार नहीं है। ऐसे व्यक्ति से पूछने से क्या लाभ, जिसको अधिकार ही नहीं है? वास्तविक अधिकार राज्य के लोगों को प्राप्त है, न कि नरेश को। इसलिये राज्य के लोगों द्वारा प्रतिनिधि चुने जाने चाहिये। जहां कहीं विधान-मण्डल हो, वहां विधान-मण्डल का अध्यक्ष चुने, या यथाविधि निर्वाचित प्रधान-मंत्री या राजप्रमुख चुने। इस बात के लिये वे ही उचित अधिकारी होंगे। रस्म की दृष्टि से भी इस व्यवस्था का रहना उचित नहीं है।

***अध्यक्ष:** मैंने माननीय सदस्य को स्थिति स्पष्ट कर दी है, परन्तु यदि वे अपने संशोधन पर जोर देना चाहें तो—

***श्री एस. नागप्पा:** संशोधन पर जोर देने का कोई प्रश्न नहीं है। श्रीमान्, आपकी बात मेरी समझ में आ गई है। आपने कृपा करके मुझे इस सम्बन्ध में प्रकाश दिया कि नरेश नाममात्र का छत्रधारी है और केवल इसलिये यहां रखा गया है, जिससे कि किसी के नाम संबोधन भेजा जा सके। परन्तु मैं भी तो यही कहता हूं कि ऐसे नरेश को सम्बोधन करने से क्या लाभ, जिसे अधिकार प्राप्त नहीं है और जिसने अपना अधिकार राज्य के लोगों को दे दिया है?

***अध्यक्ष:** भारत सरकार की प्रत्येक आज्ञा भी गवर्नर जनरल के नाम से निकाली जाती है, यद्यपि मंत्री ही इन आज्ञाओं को देते हैं। वस्तुस्थिति यहां भी इसी प्रकार है।

श्री एस. नागप्पाः श्रीमान्, मैं आपके मत को स्वीकार करता हूं और इस प्रश्न को आप पर छोड़ता हूं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** अध्यक्ष महोदय, इस सभा के सदस्यों ने जो प्रश्न उठाये हैं, उनका उत्तर देने के लिये मेरे विचार से मुझे कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। श्रीमान्, मैं आपको इसके लिये धन्यवाद देती हूं कि आपने स्वयं माननीय सदस्यों के प्रश्नों का उत्तर देने का कष्ट किया। मैं श्री विश्वनाथ दास और श्री नागप्पा के प्रश्नों के बारे में कुछ न कहूंगी, क्योंकि माननीय अध्यक्ष महोदय ने इस सम्बन्ध में पर्याप्त व्याख्या कर दी है।

जहां तक डा. पी.एस. देशमुख के संशोधन का सम्बन्ध है, मेरे विचार से जिस पद का सुझाव उन्होंने रखा है, उस की अपेक्षा वर्तमान पद (make a request in writing) की शब्दावली अधिक उपयुक्त और अधिक शिष्ट है और मेरे विचार से परिवर्तन की कोई आवश्यकता नहीं है। उनके दूसरे संशोधन को भी मैं इसी कारण से स्वीकार नहीं कर सकती।

श्री कामत ने अपने संशोधनों में जो बात कही है, उनके सम्बन्ध में मैं कहूंगी कि वह ठीक हैं और मैं सहर्ष उनके संशोधन को स्वीकार करती हूं। वे वास्तव में शाब्दिक संशोधन है और मैं उन्हें स्वीकार करती हूं।

इस सम्बन्ध में उन्होंने हैदराबाद और काश्मीर के प्रश्न का भी उल्लेख किया है। इन राज्यों के सम्बन्ध में उन्होंने जो बातें कही हैं, मेरे विचार से, मुझे उनके बारे में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है; किन्तु फिर भी मैं यह कह सकती हूं कि जो प्रस्ताव मैंने उपस्थित किया है, उससे वे असंगत है। मैं सभा से सिफारिश करती हूं कि मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाये।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, मैंने कोई संशोधन उपस्थित नहीं किया है और इसलिये असंगति का प्रश्न नहीं उठता है। मैं केवल यह जानना चाहता था कि हैदराबाद और काश्मीर इस सभा में अपने प्रतिनिधि भेजेंगे या नहीं। मैं इस सम्बन्ध में केवल स्पष्टीकरण और कुछ प्रकाश चाहता था।

***अध्यक्ष:** मैं संशोधनों को अब मतदान के लिये उपस्थित करूंगा। श्री कामत का संशोधन इस प्रकार है:

''That in sub-para. (1) of the proposed paragraph 3 of the Schedule, for the words 'to the States, individual or grouped in the Assembly', the words 'in the Assembly to the States, individual or grouped' be substituted.''

इसे प्रस्ताविका ने स्वीकार कर लिया है।

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** श्री कामत का दूसरा संशोधन इस प्रकार है:

''That in sub-para. (3) of the proposed paragraph 3 of the Schedule for the words 'is declared vacant' the words 'has been declared vacant' be substituted.''

इस सभा के मतदान के लिये उपस्थित किया जाता है। इसे भी प्रस्ताविका ने स्वीकार कर लिया है।

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब डा. देशमुख के संशोधन हैं। जहां तक उनमें से कम से कम एक की शब्दावली का सम्बन्ध है, श्री कामत के संशोधन के स्वीकार होने से वह भी स्वीकार हो जाता है। दूसरा संशोधन केवल रुचि से सम्बन्ध रखता है और वह यह कि हमें 'direction' शब्द रुचिकर है या 'request'। संशोधन इस प्रकार है:

''In the place of word 'request' the word 'direct' should be used.''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं अनुसूची के खण्ड 3 (1) पर डा. देशमुख के संशोधन को मतदान के लिये उपस्थित करता हूं।

संशोधन गिर गया।

श्री विश्वनाथ दास का संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

श्री एस. नागप्पा का संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

***अध्यक्षः** मैं अब प्रस्ताव को संशोधित रूप में सभा के मतदान के लिये उपस्थित करता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या आप कृपा करके बतायेंगे कि हैदराबाद और काश्मीर इस सभा में अपने प्रतिनिधि भेजेंगे या नहीं?

***अध्यक्षः** मैं इस स्थिति में नहीं हूं कि इस सम्बन्ध में कुछ सूचना दे सकूं। यदि सरकार चाहती तो अभी तक आपको सूचना दे देती।

प्रस्ताव संशोधित रूप में मतदान के लिये सभा के सामने उपस्थित है।

प्रस्ताव संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** श्रीमती दुर्गाबाई अब अपना दूसरा प्रस्ताव उपस्थित करें।

अनुसूची के परिशिष्ट पर संशोधन

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करती हूं कि:

''विधान-परिषद् की अधिसूचना नं. सी.ए. 43 एसईआर 48-2, तारीख 3-8-1948 ई. में उल्लिखित प्रावधान तारीख 3-8-1948 ई. से विधान-परिषद् के नियमों के अंग बना लिये जायें जैसा कि निम्नलिखित संशोधनों का आशय है:

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

अनुसूची का परिशिष्ट—

अनुसूची के परिशिष्ट के स्थान पर निम्नलिखित परिशिष्ट रखा जाये:—

परिशिष्ट

भाग 1

राज्य या राज्यों के नाम	विधान-परिषद् में नियत जगहों की संख्या	विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुनने का अधिकारी
हैदराबाद	16	हैदराबाद का नरेश
मैसूर	7	मैसूर का नरेश
काश्मीर	4	काश्मीर का नेरश
बड़ौदा	3	बड़ौदा का नरेश
त्रावणकोर	6	त्रावणकोर का नरेश
कोचीन	1	कोचीन का नरेश
जोधपुर	2	जोधपुर का नरेश
जयपुर	3	जयपुर का नरेश
बीकानेर	1	बीकानेर का नरेश
भोपाल	1	भोपाल का नरेश
कोल्हापुर	1	कोल्हापुर का नरेश
मयूरभंज	1	मयूरभंज का नरेश
सिक्किम और कूच बिहार	1	कूच बिहार का नरेश
त्रिपुरा, मनीपुर, खासी राज्य	1	त्रिपुरा का नरेश
रामपुर, बनारस	1	रामपुर का नरेश
	49	

राज्य या राज्यों के नाम	विधान-परिषद् में नियत जगहों की संख्या	विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुनने का अधिकारी
	उड़ीसा राज्य	
आठगढ़ आठमालिक बमरा बारांबा बौध बोनाई दासपल्ला धेंकानल गंगपुर हिंडोल कालाहांडी (23) क्योंझार खांडपाड़ा नरसिंहपुर नयागढ़ नीलगिरी पाल-लहाड़ा पटना रैटाखोल रनपुर सोनपुर तालचेर तिगिरिया	4	उड़ीसा का गवर्नर

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

राज्य या राज्यों के नाम	विधान-परिषद् में नियत जगहों की संख्या	विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुनने का अधिकारी
मध्यप्रान्त और बरार के राज्य		
(15) बस्तर, चंघभाकर, छुईकादन, जशपुर, कांकेर, कावर्धा, खैरागढ़, कोरिया, नंदगांव, रायगढ़, सकि, सारनगढ़, सुरगूजा, उदयपुर, मकराई	3	मध्यप्रान्त और बरार का गवर्नर
मद्रास के राज्य		
बंगाना पल्ली, पुद्दूकोटाई	1	मद्रास का गवर्नर

राज्य या राज्यों के नाम	विधान-परिषद् में नियत जगहों की संख्या	विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुनने का अधिकारी
	बंबई के राज्य	
राजपीपला पालनपुर कैंबे धरमपुर बालासिनोर बारिया छोटा उदयपुर संत लुनावाडा बांसडा साचिन जौहर दांता जंजीरा सांगली सावंतवाड़ी मुधोल (35) भोर जामखंडी मिराज (बड़ा मिराज (छोटा) कुरंदाबाद (बड़ा) कुरंदबा (छोटा) अकालकोट फल्टन जाथ औंध रामदुर्ग इडर राधनपुर सिरोही सावनुर वाडी विजयनगर जम्बूघोडा (271) छोटे राज्य, थाने इत्यादि	4	बंबई का गवर्नर

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

राज्य या राज्यों के नाम	विधान-परिषद् में नियत जगहों की संख्या	विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुनने का अधिकारी
	हिमाचल प्रदेश	
बासार सिरमूर चांबा मंडी सुकेत बाघल बघात बालसन भज्जी (21) बीजा धारकोटी धामी जुब्बल क्योंथल कुम्हारसांई कुमिहार कुठार महेलान मंगल साँगड़ी थरौआच	1	हिमाचल प्रदेश का चीफ कमिश्नर
संयुक्त राज्य काठियावाड़ (सौराष्ट)	4	राज्य का राजप्रमुख
संयुक्त राज्य मत्स्य	2	राज्य का राजप्रमुख
संयुक्त राज्य राजस्थान	4	राज्य का राजप्रमुख
संयुक्त राज्य विंध्यप्रदेश	4	राज्य का राजप्रमुख
संयुक्त राज्य ग्वालियर-इंदौर-मालवा (मध्य-भारत)	7	राज्य का राजप्रमुख
पटियाला और पूर्वी-पंजाब-राज्य-संघ	3	संघ का राजप्रमुख
कच्छ	1	कच्छ का चीफ कमिश्नर
जूनागढ़		जूनागढ़ का एडमिनिस्ट्रेटर

राज्य या राज्यों के नाम	विधान-परिषद् में नियत जगहों की संख्या	विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुनने का अधिकारी
अवशिष्ट राज्य		
जैसलमेर सांदुर टेहरी गढ़वाल बिलासपुर		
बिहार के राज्य	1	वह अधिकारी जिसे भारत सरकार नियुक्त करे
सरायकेला खर्सवा		
पूर्वी पंजाब के राज्य		
लोहारू पटौदी दुजाना		
	40	
भाग 1 और 2 का कुल जोड़	89	

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, मैंने जिस संशोधन की सूचना दी है वह अत्यंत सरल है और केवल 'the' शब्द जोड़ने के सम्बन्ध में है, वह इस प्रकार हैं:

> ''That in Part II of the proposed Annexure to the Schedule, for the words 'Governor of Central Provinces and Berar' in the 3rd Column under the heading 'Central Provinces and Berar States' the words 'Governor of the Central Provinces and Berar' be substituted.''

अध्यक्ष महोदय, मैं आपका ध्यान तथा इस सभा का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूं कि सरकारी कागजात में मेरा प्रांत किस नाम से दर्ज है। हमारे विधान के मसौदे में जिसकी प्रतियां हम सबके पास है शिड्यूल 1, पार्ट-1, पृष्ठ 154 में जिसमें विभिन्न प्रान्तों की सूची दी हुई है आप देखेंगे कि मेरा प्रान्त 'the Central Provinces and Berar' के नाम से उल्लिखित है।

***अध्यक्षः** मैं नहीं चाहता कि इस संशोधन के समर्थन में आप तर्क उपस्थित करें।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं संशोधन उपस्थित करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि यह स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्षः** क्या आप इस संशोधन को स्वीकार करती हैं?

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** मैं उसे स्वीकार करती हूं।

***अध्यक्षः** संशोधन यह है कि 'सेंट्रल प्रोविन्सेज़ एण्ड बरार' शब्दों के पूर्व 'दी' शब्द रखा जाये।

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** संशोधित रूप में प्रस्ताव पर अब मत लिया जाता है।

संशोधित रूप में प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

नये नियम 38 (वी) का बढ़ाना

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान् जी, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करती हूं कि विधान-परिषद् के नियमों से सम्बन्धित निम्न संशोधन पर विचार किया जायेः

''नियम 38 (यू) के पश्चात् निम्न नियम बढ़ा दिया जायेः

''38-V. When a bill referred to in Rule 38-A is passed by the Assembly, the President shall authenticate the same by affixing his signature thereto. When the Bill is so authenticated it shall become an Act and shall be published in the Gazette of India.''

श्रीमान् जी, यह बताने के पूर्व कि मेरा प्रस्ताव सभा द्वारा स्वीकार किये जाने योग्य है, मैं कुछ शब्दों में यह बताना अपना कर्त्तव्य समझती हूं कि यह संशोधन क्यों कर आवश्यक हुआ। मुझे विश्वास है कि माननीय सदस्य इस बात से परिचित होंगे कि विधान-परिषद् के गत अधिवेशन में, जब कि उसकी बैठक ता. 27 जनवरी को हुई थी, विधान-परिषद् के नियमों से सम्बन्धित कुछ संशोधन उपस्थित किये गये थे और उनको सभा ने स्वीकार भी किया था। उन संशोधनों में से एक यह भी था कि नियम 38 (ए) में उल्लिखित विधेयकों को पास करने की पद्धति निर्धारण करने के लिये एक नया नियम 38 (वी) बनाया जाये। श्रीमान्जी, इस प्रस्तावित नियम 38 (वी) पर यथेष्ठ वाद-विवाद हुआ और कुछ माननीय सदस्यों ने इस बात पर आपत्तियां उठाईं कि विधान-परिषद् द्वारा भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम के सम्बन्ध में अथवा इस अधिनियम द्वारा उपयोजित (अनुकूल रूप

में लाये हुये) भारतीय सरकार के सन् 1935 ई. के अधिनियम के सम्बन्ध में पारित कोई विधेयक गवर्नर-जनरल की अनुमति के अधीन नहीं होना चाहिये क्योंकि इस प्रकार की पद्धति से परिषद् की सर्वोच्च सत्ता को क्षति पहुंचती है। दूसरी आपत्ति यह उठाई गई थी कि यदि इस नियम को स्वीकार कर लिया जायेगा तो उसका यह भी फल होगा कि वर्तमान विधान में संशोधन करने वाले विधेयक पर भी गवर्नर-जनरल चाहे तो अपनी अनुमति प्रदान करे अथवा उसे रोके रखे। एक और आपत्ति उठाई गई थी कि विधान के प्रारूप को स्वीकार करने की प्रणाली तथा वर्तमान अधिनियम में संशोधन करने की प्रणाली में कोई अन्तर नहीं होना चाहिये। इन सब आपत्तियों पर वाद-विवाद हुआ। बहुत वाद-विवाद के पश्चात् श्री कामत ने यह सुझाव रखा कि प्रस्तावित नियम को मसौदा-समिति के पास वापस भेज दिया जाये और वह इन आपत्तियों को ध्यान में रखते हुये पुनः विचार करे। इस सुझाव को सभा ने स्वीकार किया और वह नियम मसौदा-समिति को भेज दिया गया। मसौदा-समिति ने इस नियम पर विचार कर लिया है और उसका नया प्रस्ताव सभा के समक्ष है। श्रीमान् जी इस नये नियम में विधान-परिषद् द्वारा नियम 38 (ए) के अन्तर्गत किसी विधेयक को पास करने पर गवर्नर-जनरल की अनुमति की आवश्यकता नहीं है। मूलरूप में यह नियम इस प्रकार था:

> ''नियम 38(ए) में उल्लिखित विधेयक जब परिषद् द्वारा स्वीकार कर लिया जायेगा तो अध्यक्ष द्वारा हस्ताक्षर की गई उसकी एक प्रति गवर्नर-जनरल को अनुमति के लिये भेजी जायेगी। जब गवर्नर-जनरल उस बिल पर अपनी अनुमति प्रदान कर देगा तब वह अधिनियम बन जायेगा और भारतीय राजकीय-पत्र में प्रकाशित किया जायेगा।''

मेरे विचार से जो परिवर्तन किया गया है उसके महत्त्व को सदस्यगण समझ गये होंगे और मुझे इस विषय की और अधिक व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। मैं सिफारिश करती हूं कि सभा मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर ले।

***अध्यक्षः** श्री कामत ने इसके सम्बन्ध में एक संशोधन की सूचना की है और वह यह है कि ''इज़'' शब्द के स्थान में ''हैज बीन'' शब्द रखे जायें।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि प्रस्तावित नियम 38 (वी) में ''व्हेन दी बिल इज सो ओथेन्टिकेटेड'' शब्दों के स्थान में ''व्हेन दी बिल हैज बीन सो ओथेन्टिकेटेड'' शब्द रखे जायें। श्रीमान् जी, यह संशोधन पूर्णतया उसी प्रकार का है जैसा कि इस सभा ने माननीया श्रीमती दुर्गाबाई के एक अन्य प्रस्ताव के सम्बन्ध में स्वीकार किया था। मेरे विचार से 'इज' शब्द के स्थान में ''हैज बीन'' शब्दों को रखना उपयुक्त और मुहावरे तथा प्रयोग के नियमों के अनुकूल होगा। अत: यदि संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो प्रस्तावित नियम इस प्रकार होगा:

> ''When a Bill referred to in Rule 38-A is passed by the Assembly, the President shall authenticate the same by affixing his signature thereto. When the Bill has been so authenticated it shall become an Act and shall be published in the Gazette of India.''

सभा की स्वीकृति के लिये मैं अपने इस संशोधन को उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव पेश हो चुका है और उस पर संशोधन भी पेश किया जा चुका है। यदि प्रस्ताव पर कोई सदस्य बोलना चाहता है तो वह बोल सकता है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** मैं संशोधन को स्वीकार करती हूं।

***अध्यक्ष:** ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रस्ताव पर कोई नहीं बोलना चाहता। प्रस्ताविका ने संशोधन स्वीकार कर लिया है। मैं पहले संशोधन पर मत लेता हूं।

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** अब संशोधित रूप में प्रस्ताव पर मत लिया जाता है।

संशोधित रूप में प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

कार्यक्रम

***अध्यक्षः** अब हम कार्यावली में दिये हुये दूसरे विषय को लेंगे। इसे लेने के पूर्व मैं सभा को वह प्रणाली बता देना चाहता हूं जिसका इस विधान के मसौदे पर विचार करते समय अनुसरण करने का मेरा विचार है। सदस्यों को ज्ञात है कि विधान का मसौदा उस मसौदा-समिति ने बनाया है जिसको इस सभा ने नियुक्त किया था और आठ मास या इससे भी अधिक काल पूर्व सदस्यों को मसौदा भेज दिया गया था। सदस्यों से निवेदन किया गया था कि वे जो सुझाव अथवा संशोधन रखना चाहते हैं उनको भेजें। केवल सदस्यों से ही नहीं वरन् जनता, सार्वजनिक संस्थाओं, प्रान्तीय सरकार इत्यादिकों से सुझाव तथा संशोधन बहुत बड़ी संख्या में आ चुके हैं। मसौदा-समिति ने उन समस्त सुझावों तथा संशोधनों पर विचार किया है और सदस्यों अथवा जनता के सुझावों को ध्यान में रखते हुये अनेकों अनुच्छेदों का फिर से मसौदा बनाया है। अतः इस समय हमारे समक्ष केवल मूल मसौदा ही नहीं है, बल्कि प्राप्त हुये सुझावों का ध्यान में रखते हुये अनेकों अनुच्छेदों का समिति द्वारा फिर से तैयार किया गया मसौदा भी है। ये सदस्यों को भेजे जा चुके हैं। अब जो मैं करना चाहता हूं वह यह है कि मसौदे पर विचार करने वाले प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने के बाद हम प्रत्येक अनुच्छेद पर विचार करें और मैं उन सब संशोधनों को, जिनकी सूचना दी जा चुकी है, विचार के लिये रखूं, ये सब सूचनायें निर्धारित समय के अन्तर्गत दी गई समझी जायेंगी जिससे कि जिन सदस्यों ने संशोधन की सूचना दे दी है उनको मसौदे पर विचार करने वाले प्रस्ताव को स्वीकार किये जाने के बाद, फिर सूचना देने की आवश्यकता न हो। मैं सदस्यों को दो दिन और दूंगा जिसमें कि वे अनुच्छेदों पर ऐसे और संशोधनों की सूचना दे दें जिन्हें वह पेश करना चाहते हों। इसके पश्चात्, मेरा विचार है कि कोई दूसरे संशोधन स्वीकार न किये जायें जब तक कि वे इस प्रकार के न हों जिनका स्वीकार किया जाना आवश्यक हो। यह सत्य है कि कुछ संशोधन समनुवर्ती संशोधन होंगे और उनको स्वीकार करना पड़ेगा। यह भी सम्भव है कि कुछ दूसरे संशोधन ऐसे हों कि सभा को किन्हीं अन्य कारणों से उन पर विचार करना आवश्यक प्रतीत हो। मैं उन संशोधनों पर वाद-विवाद

[अध्यक्ष]

को टाल नहीं दूंगा, मैं उन सब को लूंगा। पर मेरा सदस्यों से निवेदन है कि सामान्यतया उन्हीं संशोधनों को पर्याप्त समझें जिनकी सूचना हमें प्राप्त हो चुकी है और मेरे विचार में जिनकी संख्या लगभग एक हजार है। इस प्रकार हम समय की भी बचत कर सकेंगे और कार्य-कौशल में भी कोई त्रुटि न होगी और न प्रस्तावित मसौदे के समस्त अनुच्छेदों पर स्वतंत्र पर्यालोचन में किसी प्रकार की रुकावट होगी। मेरा ऐसा करने का विचार है किन्तु यह भी सत्य है कि यह सब तभी होगा जब कि इस बारे में सभा कोई अन्य निर्देश न दे। सदस्यों को मसौदे पर विचार करने के लिये बहुत समय मिल चुका है और यह कि उन्होंने मसौदे पर बारीकी से विचार किया है इसी बात से प्रकट है कि हमें 1000 संशोधनों की सूचना मिल चुकी है। यदि दैवयोग से किसी संशोधन की उपेक्षा हो गई हो और यदि कोई सदस्य यह आवश्यक समझता हो कि उस संशोधन पर विचार किया जाये तो उस संशोधन को ले लेंगे। परन्तु सामान्यतया मैं उक्त अवधि के पश्चात् और संशोधनों को नहीं लूंगा। मेरा विचार यह है कि हम डा. अम्बेडकर के प्रस्ताव पर जिसे वे उपस्थित करेंगे दो दिन तक यानी आज और कल वाद-विवाद करें। और दोनों वक्त अर्थात् प्रातःकाल तथा तीसरे पहर बैठें। शनिवार और रविवार का समय सदस्यों को संशोधनों की सूचना देने के लिये दे दें। जिन संशोधनों की सूचना आ चुकी है तथा जिनकी रविवार को सायंकाल के पांच बजे तक आ गई होगी उन सब को क्रमबद्ध किया जायेगा, छपवाया जायेगा और सोमवार को सदस्यों को दे दिया जायेगा। मंगलवार से हम संशोधनों पर वाद-विवाद प्रारंभ करेंगे। यह है वह कार्यक्रम जिसकी रूप रेखा मैंने अपने मन में बनाई है।

एक और बात है जिसे मैं सदस्यों को बता देना ठीक समझता हूं। एक प्रस्ताव तथा उसी प्रकार के एक संशोधन की सूचना हमारे पास आ चुकी है। इन दोनों का आशय है कि यह सभा विधान पर वाद-विवाद पूर्णतया स्थगित कर दे और वयस्क मताधिकार के आधार पर तथा असाम्प्रदायिक रीति से नई सभा का चुनाव होना चाहिये और उसी सभा को विधान निर्माण के कार्य को पूरा करना चाहिये। मैं यह नहीं कह सकता कि विगत दो वर्षों से जो कुछ हम करते चले आ रहे

हैं उस सब को मेटने के लिये क्या यह सभा तैयार होगी, विशेषकर जब कि मसौदे में एक ऐसा अनुच्छेद है जिसके अनुसार इस विधान के प्रवर्तन के पश्चात् कुछ वर्षों तक इस विधान का संशोधन बहुत कुछ सरल रीति से किया जा सकेगा।

यदि कोई कमी है अथवा कहीं संशोधन की आवश्यकता है तो इस प्रावधान के अनुसार जिसका कि मैंने अभी उल्लेख किया है, उसकी पूर्ति सरलता से की जा सकती है। अत: यह आवश्यक नहीं है कि जब तक हम वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनाव न कर लें तब तक समूचे विधान पर विचार करना स्थगित रखें। इस बात में पहली कठिनाई तो यही होगी कि वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचक कैसे बनाये जायें जब कि ऐसा करने के लिये हमें कोई विधि प्राधिकृत नहीं करती। यह ठीक है कि विधान के इस मसौदे में हमने वयस्क मताधिकार को कार्य रूप में लाने की बात का समावेश किया है। किन्तु यह कार्य रूप में तो तभी आवेगी जब कि यह विधान स्वीकार कर लिया गया हो। अत: यदि आप वयस्क मताधिकार रखना चाहते हैं और संशोधनों के मसौदे तैयार करने के लिये दूसरी विधान-परिषद् चाहते हैं तो हम को एक नई विधि बनानी होगी। मैं नहीं जानता कि जिस विधि के अनुसार विधान-परिषद् का निर्माण होगा उस विधि को बनाने का अधिकार किस सभा का होगा। अत: मेरे विचार से यही उत्तम है कि जिस मसौदे को इतना परिश्रम कर के हमने तैयार किया है और जिस पर मसौदा समिति तथा इस सभा के सदस्यों ने बड़ी सावधानी से तथा ध्यानपूर्वक विचार किया है उसी पर हम विचार करें।

यह कार्यक्रम है जिसका मैं अनुसरण करना चाहता हूं और यदि कोई सदस्य अन्य सुझाव रखना चाहता हो तो सहर्ष मैं उस पर विचार करूंगा।

केवल एक बात और है जिसे मैं आपको बता दूं। वह यह है कि मैं वाद-विवाद में कमी नहीं करना चाहता। प्रत्येक अनुच्छेद तथा वैधानिक प्रश्न के प्रत्येक पहलू पर विचार करने के लिये मैं सदस्यों को पूरा-पूरा अवसर देना चाहता हूं, क्योंकि यही तो हमारा अपना विधान होगा। किन्तु इसके साथ ही मैं यह भी नहीं चाहता कि किसी सदस्य द्वारा उपस्थित किये गये तर्कों को दुहरा कर अथवा पुरानी बातों को सभा के सामने पुन: विचार के लिये रख कर हम लोग इस विधान के पर्यालोचन में इतना समय लगा दें जितना कि नितान्त आवश्यक नहीं है। अत: यह ठीक न होगा कि जो निश्चय हम कर चुके हैं उन पर पुन: विचार करें। सदस्यों को यह विदित है कि पर्याप्त पर्यालोचन के पश्चात् हमने विधान के आधारभूत सिद्धान्तों

[अध्यक्ष]

को स्वीकार किया था और उन्हीं निश्चयों पर यह मसौदा, कम से कम इसका अधिक भाग, आधृत है जिनको कि हमने इतने लम्बे पर्यालोचन के पश्चात् किया था। मैं यह विश्वास नहीं करता कि सदस्यगण उन निश्चयों को इतनी आसानी से ठुकरा देंगे और उन निश्चयों पर पुनः विचार करने का आग्रह करेंगे। हो सकता है कि कुछ ऐसे विषय हों जिन पर पुनः विचार करना आवश्यक हो परन्तु सामान्यतया हम अपने उन निर्णयों के आधार पर ही आगे बढ़ेंगे जो कि पहले कर लिये गये हैं और ऐसी ही बातों में सभा प्रथम बार निश्चय करेगी जिस पर कि पहले कोई निश्चय नहीं किया गया है।

ऐसे कुछ विषय है जिन के बारे में सभा ने कोई निर्णय नहीं किया है। सभा ने कुछ समितियां नियुक्त की थीं। उन समितियों की रिपोर्टों पर इस सभा में विचार नहीं किया गया है। किन्तु मसौदा समिति ने इस मसौदे में वैकल्पिक प्रावधान रख दिये हैं एक प्रकार के तो वे सुझाव हैं जो समिति के उन विचारों के द्योतक हैं जिन पर कि उसका अन्य समितियों से मतभेद था और दूसरे जो कि समिति के विचारों से भिन्न हैं और दूसरे प्रकार के वे हैं जो उन समितियों की सिफारिशों को तथा उनके निर्णयों को कलेवर प्रदान करते हैं। जब हम उन विशेष प्रावधानों को विचार के लिये अपने सामने रखेंगे तो हम उनके औचित्य पर विचार करके यह निश्चय करेंगे कि हम मसौदा समिति की राय को स्वीकार करें अथवा किसी समिति की राय को। सभा के समक्ष इन प्रावधानों का तैयार हुआ मसौदा होगा जिससे कि इन विषयों के बारे में मसौदे को तैयार करने के लिये इस सभा को अपने काम में ठहरना न पड़े। यदि हम सम्पूर्ण विषय पर इस दृष्टिकोण से विचार करें तो मेरी समझ से वाद-विवाद का क्षेत्र बहुत ही सीमित रह जाता है क्योंकि बहुत से संशोधन तो मसौदा सम्बन्धी है और बहुत से निर्णय हम कर ही चुके हैं और जहां तक मसौदा तैयार करने का सम्बन्ध है मसौदा-समिति ने अनेकों सुझावों तथा संशोधनों पर विचार कर ही लिया है और उनको मान भी लिया है। उन प्रश्नों के आधारभूत सिद्धांतों के सम्बन्ध में जिन पर अभी निर्णय नहीं किया गया है वाद-विवाद होगा। फिर भी जहां तक अन्य सिद्धांतों का प्रश्न है उन पर अधिक वाद-विवाद तो होगा नहीं क्योंकि उन पर हमने वाद-विवाद कर ही लिया है और निश्चय कर ही चुके हैं। अतः मेरा ऐसा विचार है कि यदि व्यवसायोचित रीति से हम कार्य करें तो सम्पूर्ण विधान का पर्यालोचन हम इस विधान-परिषद् के कार्यारंभ की दूसरी वार्षिक तिथि तक अर्थात् 9 दिसम्बर, 1948 तक समाप्त करने

में समर्थ हो जायेंगे; यदि ऐसा कर सके तो उक्त तिथि के पश्चात् सभा की बैठक कुछ दिनों के लिये स्थगित रहेगी और जितने संशोधन सभा द्वारा स्वीकार कर लिये गये होंगे उन पर मसौदा-समिति उतने समय में विचार करेगी और उनको उपयुक्त स्थानों में शामिल करेगी तथा समस्त संख्या-क्रम फिर से ठीक कर दिया जायेगा और अनुच्छेदों को उपयुक्त परिच्छेदों में फिर से रख दिया जायेगा। अर्थात् जो कुछ भी आवश्यक होगा तथा 10 या 15 दिनों में जो कुछ भी हो सकेगा वह कर दिया जायेगा तब हम फिर दुबारा बैठेंगे और उस समय हम अन्तिम बार विधान को उस रूप में स्वीकार करेंगे जो कि उसका उस समय हो गया होगा। दूसरी बार के पर्यालोचन में हम जैसा कि नियम है किसी भी प्रश्न के औचित्य पर विचार नहीं करेंगे, हम केवल यही देखेंगे कि सभा के समक्ष जो मसौदा रखा गया है उसमें सभा द्वारा स्वीकृत संशोधनों को उसी रूप में रखा गया है अथवा नहीं।

मैं सभा के समक्ष यह सुझाव रखता हूं और मैं आशा करता हूं कि सदस्यों को यह स्वीकार होगा।

श्री सेठ गोविन्द दास: (मध्यप्रान्त तथा बरार : जनरल): सभापति जी, मैं यह जानना चाहता हूं कि जब तक हमारी भाषा कौन होगी, यह निर्णय नहीं हो जाता है तब तक जो धारायें हम अंग्रेजी में पास करेंगे, वे क्या उस निर्णय होने के बाद फिर से हिन्दी में आयेंगी।

अध्यक्ष: हां, जरूर उन सब धाराओं को फिर से जिस भाषा में निश्चय करेंगे, बहस होगी। और उस वक्त बहस किसी धारा के सम्बन्ध में नहीं होगी। सिर्फ यह देखा जायेगा कि ठीक तर्जुमा हुआ है या नहीं। इसलिए मैं यह समझता हूं कि हम इस वक्त जो बहस करें, वह अंग्रेजी ड्राफ्ट पर करें; क्योंकि सब लोगों ने उस पर विचार किया है और जिन्होंने तैयार किया है, उन्होंने उसी भाषा में तैयार किया है। उसके बाद आखिरी रूप जब मालूम हो जायेगा तो हम आपके सामने उसका अनुवाद रखेंगे और आप उसको मंजूर करेंगे।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान्, जी, इस बड़े महत्वपूर्ण प्रश्न की ओर, जिसको कि मेरे माननीय मित्र सेठ गोविन्ददास जी ने रखा है, मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं।

श्री महावीर त्यागी (संयुक्त प्रान्त : जनरल): सभापति जी, मैं यह अर्ज करना चाहता हूं कि बुनियादी सवालों पर बातचीत करने से पहले यदि आप इस बात पर गौर कर लें कि अब अमेंडमेंट लाने का तरीका क्या है, पुराना तरीका रहेगा या जैसा आपने अब फरमाया है, ताकि उस प्रोग्राम के मुताल्लिक राय कायम हो जाये कि किस ढंग से बहस होगी और अमेंडमेंट भेजने के लिये कितने दिन मिलेंगे।

अध्यक्ष: दोनों बातें साफ हो जायेंगी।

***श्री बालकृष्ण शर्मा:** श्रीमान् जी, मैं नहीं समझ सका कि औचित्य प्रश्न कैसे पैदा हो गया। वास्तव में मैं तो आपके सामने केवल एक बात रखना चाहता था। वह यह है कि इसके पूर्व कि आप डा. अम्बेडकर से यह कहें कि वे प्रस्ताव करें कि प्रारूपित संविधान पर विचार आरंभ किया जाये, आप उस प्रश्न पर विचार करें जो मेरे मित्र सेठ गोविन्ददास जी ने आपके सामने रखा है। यह तो निश्चय है कि जो प्रस्ताव डा. अम्बेडकर पेश करने वाले हैं उसको स्वीकार कर लेने के पश्चात् हम विधान के एक-एक खंड पर विचार करेंगे। जैसा कि श्रीमान् को ज्ञात है मैं उन लोगों में से हूं जिन्होंने कि इस प्रस्ताव की सूचना दी थी कि भारत की राष्ट्र भाषा हिन्दी हो और उसकी लिपि देवनागरी हो। अत: इस प्रश्न का उठना स्वाभाविक है कि जब हम अपने विधान के एक-एक खंड पर विचार करेंगे तो वह कौन सी भाषा होगी जिसमें कि हमारा विधान स्वीकृत हुआ समझा जायेगा। इसलिये मेरा सुझाव यह है कि जब हम विधान के खंडों पर विचार करें तो उसके एक अध्याय को समाप्त करने के पश्चात् हम उसको पुन: हिन्दी में लें और प्रत्येक खंड को जिस रूप में उसे सभा ने संशोधित किया है, और जैसा कि इस सभा की अनुवाद-समिति ने उसका अनुवाद किया है वैसा ही पास करे। अत:, मैं आपसे यह निवेदन करता हूं कि विधान के एक-एक खंड पर विचार करने के पूर्व आप इस सभा में एक उप-समिति नियुक्त करें जो कि खंडों और उनमें जैसा संशोधन सभा चाहती है उनसे परिचित रहें और जैसे ही वे स्वीकार कर लिये जायें यह समिति उन खंडों का अनुवाद करें और एक अध्याय के समाप्त हो जाने के पश्चात् इन खंडों को पुन: हिन्दी में सभा के समक्ष लाया जाये और वे हिन्दी में भी स्वीकृत समझे जायें, जिससे कि कुछ काल पश्चात् जब हम पूर्णतया अंग्रेजी भाषा को हटा दें तो मूलरूप में विधान हिन्दी भाषा में

स्वीकृत समझा जाये और वही प्रमाणिक विधान माना जाये। यदि हम किसी ऐसी विधि को अंगीकार नहीं करेंगे तो मेरे विचार से जिस समय विधान का खंड 99 हमारे समक्ष आयेगा और हम अपनी भाषा हिन्दी तथा लिपि देवनागरी घोषित करेंगे उस समय हमें बड़ी कठिनाई होगी। मैं समझता हूं कि मेरे दक्षिणी मित्रों को कुछ कठिनाई होगी। वे कह सकते हैं कि वर्तमान विधान अंग्रेजी में है जिसे हम सब समझते हैं, आप हमें हिन्दी में प्रत्येक खंड को 'पास' करने के लिये कहते हैं, उस भाषा को हम नहीं जानते। मेरे ख्याल से मेरे उन दक्षिणी मित्रों को जो इतनी हिन्दी नहीं जानते हैं अपने साथियों की सद्‌बुद्धि पर निर्भर रहना चाहिये। यहां इस सभा में ऐसे मित्र भी हैं जो अंग्रेजी नहीं जानते पर फिर भी वे आपकी सद्‌बुद्धि पर निर्भर है और वे ऐसी आपत्ति कभी नहीं करते कि वे अंग्रेजी नहीं जानते और इसलिये यह विधान अच्छा नहीं है। इसी प्रकार वे भी इस विषय में हमारे साथ सहयोग करने का प्रयत्न कर सकते हैं।

***अध्यक्षः** इस विषय में जो कुछ करने का मेरा विचार है यदि मैं उसे बता दूं तो मेरे विचार से इस प्रश्न पर वाद-विवाद बहुत कम रह जायेगा। ऐसा प्रस्ताव आया है कि अनुवाद तैयार करने के लिये एक समिति नियुक्त की जाये और एक-एक अनुच्छेद पर विचार करके यह सभा उस अनुवाद को स्वीकार करे और उसी को मूल समझा जाये। कुछ इसी प्रकार के प्रस्ताव की सूचना दी गई है। इस बारे में मैं जो करना चाहता हूं वह यह है। सदस्यों को ज्ञात है कि हमारे पास कई अनुवाद तैयार है। हिन्दी का अनुवाद है, उर्दू का अनुवाद है और हिन्दुस्तानी का अनुवाद है। विधान के मसौदे के ये तीनों अनुवाद तैयार हैं और मुझे विश्वास है कि सदस्यों को इनकी प्रतियां भी मिल चुकी होंगी। जैसे ही यह प्रश्न तय कर लिया जायेगा कि हमारी राष्ट्र भाषा क्या हो हम एक समिति बना देंगे जो उसी भाषा में तैयार किये हुये अनुवाद को ले लेगी और यह देखेगी कि अनुवाद अक्षरशः अंग्रेजी भाषा के अनुरूप है अथवा नहीं। हमारी भावनायें चाहे जो कुछ प्रेरणा करें हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि जिन व्यक्तियों का विधान का मसौदा बनाने से सम्बन्ध है उनमें से बहुत से अपने विचारों की अभिव्यक्ति हिन्दी की अपेक्षा अंग्रेजी में अच्छे प्रकार से कर सकते हैं। केवल अंग्रेजी या हिन्दी में अभिव्यंजना का ही प्रश्न नहीं है बल्कि पाश्चात्य विधानों से विचार भी

[अध्यक्ष]

लिये गये हैं, यहां तक कि जिन पदों का प्रयोग किया गया है उनमें से अनेको का तो अपना इतिहास है और अनेकों स्थलों में हमने पाश्चात्य विधानों में से वैसी की वैसी ही शब्दावली ले ली है। जिन लोगों के हाथ में विधान के प्रारूप बनाने का कार्य सौंपा गया था उनकी सामर्थ्य को ध्यान में रखते हुए यह बात प्रगट है कि विधान का प्रारूप अंग्रेजी में बनाने के अतिरिक्त हमारे लिये कोई और गति न थी। मेरे विचार से तो इससे हमें कोई क्षति नहीं हुई है, किन्तु जब किसी अनुच्छेद को यह सभा अंग्रेजी में अन्तिम रूप से स्वीकार कर लेगी तब यथा सम्भव पूर्ण और ठीक अनुवाद हम करायेंगे और उन भाषा में करायेंगे जिसे विधान-परिषद् राष्ट्रीय प्रयोजनों के लिये मान्यता देगी। अत: मैं सदस्यों से यह निवेदन करूंगा कि भाषा के प्रश्न पर जो वाद-विवाद होगा उसको वे अभी से आरम्भ न करें। कुछ समय बाद यह वाद-विवाद होगा किन्तु मैं यह वचन देता हूं कि ज्योंही उस प्रश्न का निपटारा हो जायेगा तब ही जिस भाषा को हम स्वीकार करेंगे उसी भाषा में किये गये अनुवाद को हम फिर से जंचवायेंगे या दूसरा अनुवाद करायेंगे। और सभा की स्वीकृति के लिये हम उस अनूदित विधान को सभा के सामने रखेंगे।

***श्री सेठ गोविन्द दास:** सभापति जी, आपने स्पष्ट कह दिया था कि जिस समय हमारे सामने विधान लाया जायेगा उस समय उसका मूल हमारी भाषा में होगा। मैंने उस समय आपसे इस बारे में प्रश्न भी किया था और आपने उसके उत्तर में भी यही कहा था कि जो विधान हमारे सामने आयेगा, वह मूल में हमारी भाषा में होगा। अब, आज डा. अम्बेडकर साहब जो विधान हमारे सामने ला रहे हैं वह अंग्रेजी में है। मैं आपसे यह जानना चाहता हूं कि आपने जो आश्वासन दिया था कि मूल विधान हमारी भाषा में लाया जायेगा और जब वह अंग्रेजी में आ रहा है तो फिर वह ''मूल'' जिसके लिए आपने आश्वासन दिया था, हमारी भाषा में किस समय लाया जायेगा।

***श्री घनश्याम सिंह गुप्त** (मध्यप्रान्त तथा बरार : जनरल): सभापति जी, मैं यह पूछना चाहता हूं कि जिस तरह अंग्रेजी में एक-एक आर्टिकिल को अमेंडमेंट

करके अन्तिम रूप में लिया जायेगा तो जब यह विधान-सभा अपने किसी आर्टिकिल के मुताबिक राष्ट्र-भाषा निश्चय कर लेगी तो क्या उस भाषा में भी साथ-साथ ही एक आर्टिकिल लिया जायेगा या नहीं।

अध्यक्षः हर एक आर्टिकिल लिया जायेगा।

***श्री बालकृष्ण शर्माः** श्रीमान् जी, मैं केवल यह सुझाव रखना चाहता हूं कि विधान के एक-एक खंड पर विचार करने के पूर्व क्या यह उपयुक्त नहीं होगा कि आप कृपा कर राष्ट्रीय भाषा के प्रश्न को लेने की हमें आज्ञा दे दें और उस पर निर्णय कर लें। क्योंकि यदि हम सब से पहले राष्ट्रीय भाषा के प्रश्न को ले लें और उसका निर्णय कर लें तो सदैव के लिये झगड़े का अन्त हो जायेगा। (*करतल ध्वनि*) आप अंग्रेजी में 12 या 15 खंडो पर वाद-विवाद कर सकते हैं। समिति दूसरे दिवस ही अनुवाद प्रस्तुत कर देगी और उस भाग का पूरा अनुवाद सभा के समक्ष होगा जिस पर वह विचार करेगी और तत्पश्चात् वह भी सभा द्वारा स्वीकृत समझा जायेगा। इसलिये मेरा सुझाव है कि विधान के खंडों को लेने के पूर्व आप इस सभा को सर्वप्रथम राष्ट्रीय भाषा के प्रश्न को ले लेने की आज्ञा दे दीजिये। राष्ट्रीय भाषा का प्रश्न तो कहीं 99 खंड में आयेगा जिसके लिये बहुत समय लगेगा। इस प्रश्न में अनेकों उलझनें हैं और हममें से अनेकों तो यह अनुभव करते हैं कि यह प्रश्न हमारे भविष्य से मूल रूप में सटा हुआ है। ऐसे सदस्य भी हैं जो इसको कोई महत्व नहीं देते हैं। अतः, मैं आपसे निवेदन करूंगा कि इस प्रश्न को पहले ले लीजिये और उसे तय करने का हमें अवसर दीजिये और उसके पश्चात् एक-एक खंड करके अंग्रेजी में विधान को लीजिये और फिर उनको हिन्दी में भी लेने का हमें अवसर दीजिये।

***अध्यक्षः** क्या मैं यह कह सकता हूं कि जिन कारणों के आधार पर आप भाषा के प्रश्न को पहले लेना चाहते हैं उन्हीं आधारों पर मैं इसे बाद में विचार करने के लिये हटाना चाहता हूं। आपने यही तर्क उपस्थित किया है कि आपस में मतभेद है। कुछ लोग एक विचार पर दृढ़ हैं तो अन्य उतनी ही दृढ़ता से दूसरे विचार को अपनाये हुये हैं। मेरा यह विचार है कि उत्तेजनापूर्ण वातावरण होने के पूर्व शान्त वातावरण में मौलिक अधिकारों पर वाद-विवाद करना अधिक

[अध्यक्ष]

उपयुक्त होगा। अत: मैं यह सुझाव रखता हूं कि हम विधान पर विचार आरम्भ कर दें और उसके प्रत्येक खंड पर विचार करें और जब हम इतना कर लेंगे—ऐसा करने से भाषा सम्बन्धी प्रश्न के निर्णय होने में कोई कठिनाई पैदा न होगी—तब यह सभा भाषा के विषय में हित अहित का ध्यान करके निर्णय करेगी और जब वह निर्णय कर लिया जायेगा तब उस भाषा में भी प्रत्येक अनुच्छेद स्वीकार किया जायेगा। अत: इसमें कोई हानि नहीं है। आरम्भ में ही यह बात ठीक नहीं कि यहां कटुता का वातावरण कायम हो जाये।

श्री आर.वी. धुलेकर (संयुक्त प्रान्त : जनरल): सभापति जी, जो प्रश्न मैं आपके सामने उपस्थित करना चाहता हूं वह यह है कि पहले दिन इस भवन में जब मैंने हिन्दी में व्याख्यान दिया था तो उस समय जो मैंने अपना संशोधन पेश किया था उसमें मैंने लिखा था कि हमारी राष्ट्र-भाषा में ही यह विधान बनना चाहिए और अंग्रेजी भाषा का जो विधान बनेगा वह उसका तर्जुमा समझा जाना चाहिए। इसलिए मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करना चाहता हूं कि जिस समय अंग्रेजी भाषा के विधान पर बहस पूरी हो जाये और वह पूरा पास कर लिया जाये उसके बाद आपकी आज्ञा के अनुसार जो राष्ट्र-भाषा निश्चित होगी तो उस समय मैं आपके सामने यह प्रस्ताव उपस्थित करूंगा कि जो विधान राष्ट्र-भाषा में लिखा जायेगा वही विधान मौलिक समझा जायेगा। अंग्रेजी भाषा से तर्जुमा किया हुआ विधान अपनाना यह हमारे लिए अपमानजनक बात होगी। किसी राष्ट्र ने ऐसा अभी तक नहीं किया है।

मैं यह अवश्य मानता हूं कि यहां सदस्य अंग्रेजी में ही बहस करेंगे। और मैं भी अंग्रेजी में बहस करूंगा और करना चाहता हूं और उसके बाद हिन्दी में करूंगा। मैं इस बात को आपसे कह देना चाहता हूं कि मैं एक प्रस्ताव आपके सामने पेश करना चाहता हूं कि जब यह बहस खत्म हो जाये और अंग्रेजी में जो विधान पास हो जाये वह राष्ट्र-भाषा का तर्जुमा माना जाये और राष्ट्र-भाषा का विधान हमारा मौलिक विधान माना जाये। और अंग्रेजी भाषा जिसमें होगी वह तर्जुमा कहलायेगा। मैं आपसे प्रार्थना करना चाहता हूं कि मैं उस प्रस्ताव को किस समय आपके सामने उपस्थित करूं।

***अध्यक्षः** यह तो इस असेम्बली को अधिकार है कि वह कह दे कि हिन्दी या उर्दू जिस भाषा में चाहें, विधान पास होगा और उसको मूल समझा जायेगा। दूसरे सब उसके तर्जुमें समझे जायेंगे। यह आपके अधिकार में हैं।

***श्री सुरेश चन्द्र मजुमदार** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): श्रीमान् जी, अनुवाद के सम्बन्ध में आपकी आज्ञा हुई और कुछ भाषाओं में पूरा अनुवाद हो गया। और न इस बारे में कोई आपत्ति ही करता है किन्तु विधान निर्माण के कार्य में यह आवश्यक है कि हमारे देश की जनता उसे समझ सकें—चाहे उनकी बोलचाल की भाषा कोई भी हो। इसलिये यदि आप अपनी अनुवाद की योजना में हिन्दी और उर्दू के साथ-साथ भारत की अन्य प्रमुख भाषाओं को भी सम्मिलित कर लें तो प्रत्येक व्यक्ति के लिये विधान को समझना सुगम हो जायेगा। चाहे फिर राष्ट्र भाषा कोई सी भी क्यों न हो। ऐसा करने से कोई यह नहीं कह सकेगा कि कार्यवाही ऐसी भाषा अथवा भाषाओं में हुई जो कि देश के समस्त भागों को बोधगम्य न थी। मेरा यह सुझाव है। हिन्दी भाषा के प्रति मेरा अनादर का भाव नहीं है और अंग्रेजी भाषा से मुझे विशेष प्रेम नहीं है, पर चूंकि विधान बड़े महत्त्व का विषय है, अतः मेरे विचार से इसे देश के समस्त लोगों के लिये बोधगम्य बनाना चाहिये। इसलिये मेरी यह प्रार्थना है कि आप अपनी अनुवाद योजना में कम से कम भारत की प्रमुख भाषाओं को तो कृपा पूर्वक सम्मिलित कर लें और मेरे विचार से आपके लिये यह प्रबन्ध करना कठिन नहीं होगा।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, हमारे समक्ष जो बिल है उस पर विचार करने के सम्बन्ध में जिस पद्धति का अनुसरण करने के लिये आपने घोषणा की है। उसका उस पर्यालोचन पर पर्याप्त प्रभाव पड़ेगा जो अभी उस पर कुछ समय पश्चात् होगा। आपने दो बातों की ओर ध्यान आकर्षित किया है।

पहली बात यह है कि चूंकि इस विधेयक में निहित सिद्धांतों को इस परिषद् ने कुछ मास पूर्व स्वीकार कर लिया है इसलिये ऐसा कोई संशोधन नहीं रखा जाना चाहिये जो कि इनमें से किसी भी सिद्धांत के विरुद्ध हो या उनमें कोई परिवर्तन करना चाहता हो। श्रीमान् जी, यह विषय.....

***अध्यक्षः** मैंने 'सामान्यतया' शब्द से उसे परिमित किया है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** यह सब अध्यक्ष पर निर्भर है कि वह इस शब्द की कैसी व्याख्या करें। पर मुझे याद है कि इस विधेयक में निहित सिद्धांतों पर जब वाद-विवाद हो रहा था उस समय यह अनेकों बार कहा गया था कि बाद में जब कि हमारे समक्ष विधान का पूर्ण चित्र होगा हमें अपनी सम्मति प्रगट करने का अच्छा अवसर मिलेगा। श्रीमान्, मेरी सम्मति में इस पहलू से भी आपको विचार करना है। जिन निष्कर्षों को कुछ मास पूर्व हमने स्वीकार कर लिया था यदि उनमें से किसी के बारे में हममें से कोई सदस्य समस्त अधिनियम को पढ़ने के बाद अथवा अधिक मनन करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा हो कि उसमें संशोधन अथवा पूर्णतया परिवर्तन किया जाये तो यह न होना चाहिये कि ऐसे सदस्य की इस बारे में अपनी सम्मति प्रगट करने के अधिकार पर कोई प्रतिबंध लगाया जाये।

***अध्यक्ष:** यह विश्वास मैं अभी दिला देता हूं कि मैं पर्यालोचन को अनियमित नहीं ठहराऊंगा। इस बात का निर्णय सभा करेगी कि वह अपने पूर्व निर्णयों से पीछे हटना चाहती है या नहीं। अध्यक्ष के नाते किसी वाद-विवाद या पुनर्विचार को नियम विरुद्ध ठहराने का मेरा विचार नहीं है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** सभा को तो यह अधिकार है कि वह यह निश्चय करे कि उसे अपने पूर्व निर्णयों से हटना है या नहीं। यदि कुछ समय पूर्व अपने स्वीकृत किये हुये सिद्धांतों में सभा कोई परिवर्तन करना नहीं चाहती है तो उसे यह अधिकार होगा कि किसी सदस्य द्वारा सुझायें गये परिवर्तन को वह न माने। मैंने तो यह सब इसलिये कहा था कि मुझे ऐसा प्रतीत हुआ था कि आपकी इच्छा कुछ संशोधनों को नियम विरुद्ध ठहरा देने की है।

***अध्यक्ष:** मुझे खेद है कि मेरी बात से आपके मन में यह भ्रम पैदा हुआ।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** श्रीमान् जी, मुझे आपसे यह सुनकर प्रसन्नता हुई कि आपका यह विचार नहीं है। इसलिये आपके भाषण के इस पहलू पर मुझे कुछ और कहने की आवश्यकता नहीं है।

अब मैं दूसरी बात को लेता हूं जिसकी भविष्य में संशोधनों की सूचना देने के लिये सदस्यों को याद रखने के लिये आपने कहा था। आपने कहा था कि अगले रविवार को सायंकाल के पांच बजे तक संशोधनों को रखने की इजाजत है और उसके पश्चात् संशोधनों को वाद-विवाद के लिये स्वीकार नहीं करेंगे जब तक कि आप उन्हें महत्त्वपूर्ण न समझें। श्रीमान् जी, मेरे विचार से आपने जो कुछ कहा उसके सार का हम सब लोग आदर करते हैं। हमारे वाद-विवाद यथा सम्भव उचित धारा में प्रवाहित होने चाहिये और उनका सम्बन्ध केवल उन विषयों से ही रहना चाहिये जिन पर सभा को पुनः विचार करने की आवश्यकता हो। अतः संशोधनों की रूपरेखा के सम्बन्ध में आपकी शिक्षा का स्वभावतः सभा के प्रत्येक सदस्यों पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा। पर मेरा निवेदन है कि कोई भी संशोधन चाहे कभी आये केवल इसी आधार पर कि वह रविवार को सायंकाल के 5 बजे तक नहीं आया, नियम विरुद्ध नहीं ठहराया जाना चाहिये। अध्यक्ष का यह कर्त्तव्य है कि वह वाद-विवाद का नियमन करे और निःसंदेह इस सभा का प्रत्येक सदस्य अध्यक्ष के दुःसह कार्य में सहायता करने के लिये इच्छुक है विशेषकर जबकि अध्यक्ष-पद को इस समय आप जैसा प्रतिष्ठित पुरुष सुशोभित किये हुये है। परन्तु नियमों के अन्तर्गत हमारे कुछ निश्चित अधिकार है जिनमें से प्रत्येक की सर्वदा रक्षा के लिये प्रत्येक सदस्य को प्रस्तुत रहना चाहिये। नियमों के अन्तर्गत हमें किसी समय भी संशोधन रखने का अधिकार है और यदि नियम द्वारा निश्चित समय के अंतर्गत संशोधन रख दिये जाते हैं तो नये संशोधनों को पेश करने के हमारे इस अधिकार पर कोई पाबन्दी नही हो सकती। श्रीमान् जी, आप भी इस पर कोई पाबन्दी नहीं लगा सकते।

श्रीमान् जी, इस कारण मैं यह सुझाव रखता हूं कि यदि आप किसी प्रस्तावित संशोधन को व्यर्थ समझते हैं अथवा उसका सम्बन्ध किसी बहुत ही महत्त्वहीन विषय से समझते हैं तो आप तत्सम्बन्धी सदस्य को यह सम्मति दे सकते हैं कि वह अपना संशोधन वापस लेकर सभा के समय की बचत करे। परन्तु यदि वह सदस्य किसी महत्त्वहीन विषय पर भी अपने विचार प्रकट करने की हठ पकड़ता है तो

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

मुझे आशा है कि तो आप, जिनका कि कर्त्तव्य हमारे अधिकारों तथा विशेषाधिकारों को बनाये रखना है, अधिशासी स्वविवेक द्वारा उसके संशोधन रखने के अधिकार को नहीं छीनेंगे। श्रीमान् जी, यह बड़ा महत्त्वपूर्ण विषय है। यह प्रश्न सिद्धांत का है। मैं नहीं समझता कि अध्यक्ष तथा सभा के किसी सदस्य में प्रकट रूप में कोई विरोध होगा, परन्तु मैं इस बात का इच्छुक हूं कि कोई भी अधिकार चाहे फिर वह छोटे से छोटा ही क्यों न हो पर जिसके उपभोग करने का नियमों द्वारा हमें अधिकार है, प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से हम से न तो छीना जाये और न कम किया जाये। मैं आशा करता हूं कि मेरे विचारों पर अध्यक्ष ध्यान देंगे और जिस भावना से मैंने यह बातें कही हैं उसको भी ठीक-ठीक समझा जायेगा। हम सब आपका आदर करते हैं। जो कुछ आप कहते हैं उसे हम बड़े ध्यान से सुनते हैं और इस इच्छा से सुनते हैं कि आपके शब्दों का पालन करें। परन्तु हम आपसे यह साग्रह निवेदन करते हैं कि आप हमारे छोटे से छोटे विशेषाधिकार को भी कम न करें। हमारा यह भी निवेदन है कि यदि उन पर (विशेषाधिकारों) कोई आक्रमण करे तो आप उनकी रक्षा करें। और मेरा विश्वास है कि वाद-विवाद इस प्रकार से होगा कि हमें यह प्रतीत हो कि आप हमारे गौरव तथा विशेषाधिकारों के संरक्षक है और नियमों के अन्तर्गत सभा के सदस्यों के प्रत्येक अधिकार को आप बनाये रखेंगे।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि इस सभा में मैंने ऐसी कोई बात नहीं की है जिसके कारण कोई सदस्य यह शिकायत कर सके कि मैंने इस प्रकार कार्य किया है जिससे कि उसके किसी अधिकार का अपहरण हुआ है।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान् जी, मैं आपका ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूं कि मैं इस प्रकार के प्रस्ताव की सूचना पहले ही दे चुका हूं:

> ''कि विधान के मसौदे पर तब तक विचार स्थगित रखा जाये जब तक कि संयुक्त निर्वाचन के आधार पर नई तथा अधिकार सम्पन्न विधान-परिषद् का चुनाव न हो जाये और भारत में साम्प्रदायिक दलों के स्थान पर राजनैतिक दलों का निर्माण न हो जाये।''

मेरी यह भी प्रार्थना है कि आप उस व्यवस्था को भी याद कर लें जोकि आपने मेरे उस संशोधन के उपस्थित किये जाने पर की थी जिसे कि मैंने अनुकरणीय-प्रान्तीय-संविधान सम्बन्धी रिपोर्ट के उपस्थित किये जाने के समय प्रस्तुत किया था और जो इस प्रकार था कि जब तक कि हम संघ के विधान पर विचार न कर लें तब तक प्रान्तीय विधान पर विचार करना स्थगित कर दिया जाये.....

***अध्यक्षः** उपयुक्त समय पर हम आपके संशोधन पर विचार करेंगे।

***मौलाना हसरत मोहानीः** मैं अपने प्रस्ताव को पहले रखना चाहता हूं।

***श्री हुसैन इमामः** बिल पर विचार करने का प्रस्ताव पेश नहीं हुआ है इस कारण अभी संशोधन नहीं रखा जा सकता।

***अध्यक्षः** यही तो मैं कह रहा हूं। उपयुक्त समय पर हम उसको लेंगे।

परिषद् दिन के तीन बजे तक दोपहर के भोजन के लिये स्थगित हुई।

---

*दोपहर के भोजन के पश्चात् दिन के तीन बजे परिषद् की बैठक फिर हुई, (**माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद**) अध्यक्ष पद पर आसीन थे।*

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, जब हम दोपहर के खाने के लिये उठे थे उस समय आपके समक्ष यह प्रश्न था कि पर्यालोचन के सम्बन्ध में जिस पद्धति की घोषणा आपने की थी उसका अनुसरण किया जायेगा अथवा आप मेरे मित्र पं. हृदयनाथ कुंजरू के निवेदन को कृपया स्वीकार करेंगे। नियमों के अनुसार हमें यह अधिकार है कि हम संशोधनों की सूचना दो दिन पूर्व भेजें यदि हम चाहते हों कि यह संशोधन नियमानुकूल दिये गये समझे जायें। मुझे इसके सम्बन्ध में नियम उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं है। जब हमारे पास विधान का मसौदा भेजा गया था उस समय मैंने और अन्य अनेकों व्यक्तियों ने जो यहां उपस्थित हैं स्वभावत: यह विचार किया कि वाद-विवाद के सम्बन्ध में उसी प्राचीन पद्धति का अनुसरण किया जायेगा। अत: मेरे अनेकों मित्रों ने इस आशय से अपने सम्पूर्ण संशोधनों को नहीं भेजा कि हम उन विषयों पर यहां आकर वाद-विवाद करेंगे और तत्पश्चात् अपने संशोधनों की सूचना देंगे। दो दिन पहले सूचना भेजने का जो नियम अब तक था उससे हमें यह सुविधा थी कि हम आपस में छोटे या बड़े समूहों में एकत्रित होकर विचार विनिमय कर सकते थे और तत्पश्चात् संशोधनों को भेज सकते थे यदि इस पद्धति को ठुकराया जाता है और एक-एक वाक्यखण्ड पर विचार करते समय संशोधनों की सूचना देने की अनुमति नहीं दी जाती है तो उन लोगों के प्रति न्याय नहीं होगा जो अभी तत्काल ही परिषद् में सम्मिलित हुये हैं। अनेकों ऐसे सदस्य हैं जिन्होंने आज रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये हैं और कुछ घंटे पूर्व ही उनको परिषद् के पत्र मिले हैं। विधान का मसौदा एक मोटो पुस्तक है जिसको हम पढ़ना चाहते हैं और उस पर विचार करना चाहते हैं यदि आप मेरे मित्र श्री कुंजरू महोदय की प्रार्थना स्वीकार कर लें और वाद-विवाद को जारी रखते हुये नवागन्तुकों को विधान के मसौदे को अध्ययन करने का समय दे दें तो यथासमय संशोधनों को भेजने की उन्हें सुविधा मिल जायेगी और इस पर वे अपने विचार भी व्यक्त कर सकेंगे, अन्यथा नवागन्तुकों को कोई भी सुविधा नहीं मिलेगी।

श्रीमान् जी, हम विधान-परिषद् के सदस्य हैं और विधान निर्माण कर रहे हैं। धारा-सभा द्वारा विचार किया हुआ और स्वीकृत किसी साधारण कानून का प्रतिमास अथवा इसमें लगभग एक बार संशोधन किया जा सकता है, पर विधान का संशोधन

बारंबार नहीं होता। आने वाली शताब्दियों के लिये हम विधान निर्माण कर रहे हैं और उसमें इस सरलता से संशोधन नहीं किया जा सकता है। जिस सरलता से हम धारा-सभा के कानूनों में संशोधन कर सकते हैं। इस कारण सभा के सदस्यों को अपने विचार व्यक्त करने के लिये पूर्ण सुविधा प्रदान की जानी चाहिये।

अत: मैं पुन: प्रार्थना करता हूं कि आप इस बात पर कृपया विचार करें कि नियमोल्लिखित दो दिन पूर्व संशोधन सूचना भेजने का हमारा अधिकार न छीना जाये और आप विचाराधीन प्रस्ताव से संगत संशोधनों को रखने की स्वीकृति दें। अध्यक्ष की अनुमति के बिना ऐसा कोई संशोधन न पेश किया जाये जिससे कि मुख्य प्रस्ताव निष्क्रम होने की संभावना हो। किसी प्रस्ताव में संशोधन करने की सूचना उस प्रस्ताव के सभा में पेश होने से एक दिन पूर्व दे दी जानी चाहिये। मेरा निवेदन है कि इस नियम के रहते हुये जब तक नियमों में परिवर्तन न किया जाय...

***अध्यक्ष:** तत्सम्बन्धित नियम 38 (ओ) है।

***श्री महावीर त्यागी:** वह इस प्रकार है:

> ''जिस दिवस विधान या बिल पर जैसी भी सूरत हो, विचार किया जायेगा उस दिन से पूरे दो दिन पूर्व यदि किसी संशोधन की सूचना नहीं दी गई हो तो कोई भी सदस्य उस संशोधन के पेश होने में आपत्ति कर सकता है और यदि अध्यक्ष ने स्वविवेक से ऐसे संशोधन को पेश करने की आज्ञा नहीं दी है तो ऐसी आपत्ति मानी जायेगी।''

क्या आप इस नियम 38 (ओ) की व्याख्या इस प्रकार से करना चाहते हैं कि सम्पूर्ण विधान...

***अध्यक्ष:** मैं आशा करता हूं कि माननीय सदस्य इस विषय पर आज निर्णय देने के लिये मुझे विवश नहीं करेंगे। यह अच्छा हो कि इस बात को आप यही तक रहने दें। (*हंसी*)

***श्री एच.वी. कामत:** क्या मैं आज प्रात:काल के आपके भाषण द्वारा उत्पन्न हुये दो प्रश्नों के स्पष्टीकरण के लिये निवेदन कर सकता हूं?

श्री अलगू राय शास्त्री: अध्यक्ष महोदय, मैं देखता हूं कि हमारे माननीय सदस्य बीच में बोलने के लिये खड़े हो जाते हैं। मैं निवेदन करना चाहता हूं कि मुझे भी बोलने का अवसर मिलना चाहिए।

***श्री एच.वी. कामतः** आपके प्रातःकाल के भाषण के सम्बन्ध में कुछ स्पष्टीकरण चाहता हूं। आपने यह कहा था कि 9 दिसम्बर को सभा कुछ दिनों के लिये स्थगित कर दी जायेगी। क्या हमारी सभा उस तारीख में स्थगित कर दी जायेगी चाहे हम जब तक विधान के मसौदे पर विचार समाप्त कर सकें या नहीं?

***अध्यक्षः** ऐसा नहीं। मैंने तो केवल एक कार्यक्रम आपके समक्ष रखा था जिसे मैं ठीक समझता हूं। यह तो सभा के निर्णय करने की बात है, यदि वह चाहे तो वह आगामी वर्ष के 9 दिसम्बर तक कार्य करती रहे। (*हंसी*)

***श्री एच.वी. कामतः** क्या हमें 9 दिसम्बर से बाद में बताई जाने वाली किसी तारीख तक अवकाश मिलेगा?

***अध्यक्षः** यह सब इस कार्य पर निर्भर है। मैंने अनेकों बार यह कहा है कि मैं वाद-विवाद का संक्षेपण नहीं करना चाहता। चूंकि हम देश के विधान पर विचार कर रहे हैं; हम कोई कार्य शीघ्रता में नहीं करेंगे। परन्तु साथ ही साथ मैं समय व्यर्थ नहीं खोना चाहता।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या हमारी सभा 9 दिसम्बर को स्थगित कर दी जायेगी चाहे उस समय तक हम विधान के मसौदे पर विचार समाप्त कर चुके हों या नहीं?

***अध्यक्षः** देखा जायेगा।

***श्री एच.वी. कामतः** आपने प्रातःकाल हैदराबाद तथा भोपाल के भाग न लेने के सम्बन्ध में कहा था कि यह विषय ऐसा है कि जिस पर सरकार ही विचार कर सकती है।

श्रीमान् जी, हमारे नियमों के अनुसार आप हैदराबाद तथा अन्य रियासतों के शासकों को विधान-परिषद् में प्रतिनिधि भेजने का आदेश दे सकते हैं। पर आपने यह कहा था कि यह विषय सरकार के आधीन है। मेरी समझ में नहीं आता है कि इस मामले में सरकार का क्या वास्ता है? शासकों को परिषद् में प्रतिनिधि भेजने का आदेश देने के लिये आपको पूर्ण अधिकार है।

***अध्यक्षः** परिषद् में बैठे हुये मुझे किसी व्यक्ति को कोई कार्य करने के लिये विवश करने का कोई अधिकार नहीं है। जो यहां आ गये हैं, उनको परिषद्

के विचार विमर्श में भाग लेने का अधिकार है और जो नहीं आये हैं उन्हें हम आने के लिये विवश नहीं कर सकते हैं। सरकार ही उसके प्रति कार्यवाही कर सकती है।

श्री अलगू राय शास्त्री: अध्यक्ष महोदय, जहां तक मुझे स्मरण है पिछले अधिवेशन में आपने यह घोषणा की थी कि जो विधान यहां पर आवेगा वह हिन्दी भाषा में होगा और उसका अनुवाद अंग्रेजी में हो सकता है। आज आपके वक्तव्य से यह निराशा हुई कि जो बहस और वाद-विवाद हम इस विधान के सम्बन्ध में करने जा रहे हैं, उसका वही ड्राफ्ट हमारे सामने आवेगा जो अंग्रेजी में ड्राफ्टिंग कमेटी ने तैयार किया है। अनुवाद के रूप में हमारे सामने उसका हिन्दी स्वरूप भी है। हिन्दी स्वरूप हमारे सामने होते हुए मैं नहीं समझता कि हम हिन्दी वाले ही ड्राफ्ट पर क्यों न यहां विचार करें। ऐसा हो सकता है कि हिन्दी का जो ड्राफ्ट हमारे सामने आया है, हम उसकी ही धाराओं को लेकर आगे चलें और उसमें जहां कोई क्लिष्ट ट्रांसलेशन आ जाये तो वह जो अंग्रेजी का ड्राफ्ट डा. अम्बेडकर के हाथ में है और जो स्वयं संस्कृत भाषा के प्रकांड पंडित हैं वह उसका अर्थ यहां के उन भाइयों को उस अंग्रेजी के ड्राफ्ट से समझा दें जिनको हिन्दी समझने में कठिनाई हो। प्रत्येक देश के लिए आवश्यक है कि वह अपना विधान अपनी भाषा में तैयार करे। हम एक ऐसे देश के निवासी हैं कि जिसकी एक स्वतंत्र भाषा है, तो हमारा विधान धारा-धारा करके उसी भाषा में यहां आना चाहिए। यह नहीं होना चाहिए कि हम एक विदेशी भाषा में विधान पेश करें।

जब यहां विधान-सभा का पहला अधिवेशन हुआ था, आपको स्मरण होगा कि मैंने यह प्रार्थना की थी कि जो वाद-विवाद इस भवन में हो वह ऐसी भाषा में होना चाहिये जिसको कि इस देश के निवासी समझ सकते हों। इस सभा को इंगलिस्तान की पार्लियामेंट नहीं बनाना है। यह उपनिवेशिका शब्द, डोमिनियन का शब्द भी बिलकुल विदेशी है। मुझे मौलाना मुहम्मदअली साहब की एक उक्ति याद आती है। वह कहा करते थे कि डोमिनियन का शब्द अफ्रीका के लिए, साउथ अफ्रीका के लिए, लागू हो सकता है, न्यूजीलैंड के लिए लागू हो सकता है, कनाडा के लिए लागू हो सकता है, आस्ट्रेलिया के लिए लागू हो सकता है और यह शब्द टसमानियां के लिए लागू हो सकता है। ये वे उपनिवेश हैं जहां

[श्री अलगू राय शास्त्री]

पर हमारे विदेशी शासकों ने जाकर अपने उपनिवेश बनाये थे और अपनी छावनियां डाली थी। हिन्दुस्तान में वह छावनियां नहीं हो सकती हैं। उन लोगों ने उन देशों में जाकर अपनी छावनियां बनाई, अपने उपनिवेश बनाये और अपनी भाषा को ले गये और वहां के लोग वह भाषा बोलते हैं। लेकिन वह बात हमारे ऊपर लागू नहीं हो सकती। यहां सहस्त्रों वर्षों की हमारी भाषा है, सहस्त्रों वर्षों की हमारी संस्कृति है। यहां हमारा अपना साहित्य है। जिस तरह इंगलिस्तान के रहने वाले अपने अंग्रेजी साहित्य, शेक्सपियर और मिल्टन पर गर्व कर सकते हैं वैसे ही हम कालीदास, तुलसीदास, जायसी और सूरदास की कृतियों पर गर्व कर सकते हैं। तो एक ऐसा देश जिसकी अपनी भाषा है, वह एक विदेशी भाषा में अपना पहला स्वतंत्रता का विधान बनावे, यह एक बहुत ही लज्जाजनक बात होगी। इसलिये मैं फिर आपसे निवेदन करना चाहता हूं, प्रार्थना करना चाहता हूं कि आप जो हिन्दी का विधान है, उसको ही मूल रूप देकर यहां पर चलावें। यहां पर उसकी ही धाराओं पर बहस की जाये और जो अंग्रेजी का ड्राफ्ट है, वह यहां नहीं आना चाहिए; वह केवल अनुवाद के रूप में रहे।

अंग्रेज यहां से चले गए हैं उनकी छावनियां यहां पर नहीं है। हमारे यहां के आप तथा आपके दूसरे साथी प्रतिष्ठित नेता जिन्होंने हमारे इतिहास में अंग्रेजों के राज्य को यहां से हटाकर अपने नाम को सदा के लिए अमर कर दिया है और जिनके नाम चिरस्मरणीय हैं, उनका अनुकरण कर हमको चाहिये कि उपनिवेश का जो शब्द है उसे भी हम यहां से मिटा दें। और यह मिटेगा। उसके ऊपर यहां पर वाद-विवाद होगा और उस पर इस सभा के बहुत से सदस्य राय प्रकट करेंगे। यह प्रश्न आगे चलकर आवेगा। इस समय जो प्रश्न हमारे सामने है वह तो यह है कि आया हमारी कोई अपनी संस्कृति है, हम किस भाषा में गाते हैं, किस भाषा में रोते हैं, किस भाषा में कविता करते हैं और किस भाषा में अपनी भावनाओं को प्रकट करते हैं। हम जिस भाषा में अपने भावों को प्रकट करते हैं, उसी में हमें अपना विधान बनाना चाहिए। इस विधान का प्राथमिक अंश ही यह है कि ''हम भारत के लोग'' अपने को विधान दे रहे हैं।

'हम भारत के लोग' से तात्पर्य केवल इन चन्द आदमियों से ही नहीं है, जोकि यहां पर बैठे हैं, बल्कि भारत की जो मूक जनता है, उससे है और जिसके कि

प्रतिनिधि होकर हम यहां पर काम कर रहे हैं। तो हम जो विधान यहां दे रहे हैं वह उसी भाषा में होना चाहिए जिसको कि हम समझते हैं खेद की बात है कि हमारे बहुत से पुराने नेता लोग कहने लगे हैं कि भाषा का प्रश्न सुलझा नहीं है। अभी हमारी भाषा में सुधार नहीं हुआ है और अभी अंग्रेजी को रहना ही पड़ेगा। इस प्रकार की बातें कभी-कभी कही जाती हैं। मैं उन नेताओं का नाम यहां पर नहीं लेना चाहता। लेकिन जब वह यह कहते हैं कि हमारी कोई भाषा नहीं है तो मैं उनसे यही कहना चाहता हूं कि हमारी भाषा एक समुन्नत भाषा है, हमारी भाषा एक सम्पन्न भाषा है जिसके अन्दर अच्छी से अच्छी भावनायें व्यक्त हो सकती हैं। इस भाषा की सुन्दर शब्दराशि है। हमने अपनी भाषा को अपने प्राचीन ऋषियों से पाया है, हमने इन सब से अपना शब्दकोष पाया है, हमने अपनी भाषा को अपने प्राचीन साहित्य से पाया है जिसके अन्दर कि महाभारत लिखा गया है, रामायण लिखी गई है। हमने उसमें से सुन्दर शब्द लेकर अपनी भाषा को बनाया है। इसलिए यह नहीं कह सकते कि...

अध्यक्षः माफ कीजिये, मेरी समझ में नहीं आया कि आप किस बात पर बहस कर रहे है, वह सब बातें मानी हुई हैं।

श्री अलगू राय शास्त्रीः मैं सिर्फ यह निवेदन कर रहा हूं कि विधान का मूल रूप जिसके ऊपर हम यहां बहस करेंगे वह हिन्दी वाला रूप होना चाहिए, अंग्रेजी का नहीं। और इसलिए हम लोगों को हिन्दी की धाराओं को मानकर अपने संशोधन पेश करने की छूट होनी चाहिए। मैं यह निवेदन करना चाहता हूं और वह इस विचार से करना चाहता हूं कि इससे यह मालूम हो कि हमारी कोई भाषा है। हम यह नहीं समझते कि हम अंग्रेजी साम्राज्य के अंतर्गत एक ऐसा उपनिवेश हैं कि जो अंग्रेजी ही बोल सकते हैं।

मैं दो शब्द और कहना चाहता हूं। यह दुर्भाग्य की बात है या सौभाग्य की बात है कि समुद्रों के तटपर रहने वाले हमारे भाई जहां अंग्रेज आकर पहले उतरे, उन लोगों ने अंग्रेजी भाषा में तरक्की की है, उन्होंने अंग्रेजी भाषा में प्रगति की है और वही सबसे अधिक कठिनाई अनुभव करते हैं जब हिन्दी भाषा का जिक्र आता है। यह मद्रास के भाइयों के सौभाग्य में था कि उन्होंने वैदिक साहित्य और संस्कृति को लेकर भारत को अपने यहां के आचार्यों द्वारा सुन्दर संदेश दिया, उन्हीं के भाग्य में यह भी था कि वह अंग्रेजी...

अध्यक्षः मैं आपसे अर्ज करूं कि आप फिर वही बहस करते जा रहे हैं जिसकी कि कोई जरूरत नहीं है क्योंकि यह बात मानी हुई है। सब लोग मानते हैं कि हम अपनी भाषा में कान्स्टीट्यूशन बना सकते हैं और बनावेंगे। इस पर अब कोई बहस की गुंजायश नहीं है। पहले कई मर्तबा इसका जिक्र आ चुका है और जब यह बात आवेगी तब आप उसको मंजूर करेंगे।

श्री अलगू राय शास्त्रीः इस समय मैं संशोधन हिन्दी में देने की बात कर रहा हूं।

अध्यक्षः आप हिन्दी में संशोधन देना चाहें तो दे सकते हैं। मगर जो चीज अंग्रेजी में आवेगी, उस पर हिन्दी में संशोधन कैसे बैठेगा यह मेरे लिए दिक्कत तलब बात होगी। मगर आप देना चाहें तो दे सकते हैं।

सरदार भूपेन्द्रसिंह मान (पूर्वी पंजाब : जनरल)**:** जनाब सदर, मैं आपकी तवज्जह इस बात की तरफ दिलाना चाहता हूं कि पिछली मजलिस में इस अयवान ने फैसला किया था, माइनोरटी बोर्ड की रिपोर्ट पर बहस करते हुए कि चूंकि ईस्ट पंजाब के हालात नारमल नहीं हैं, इसलिए सिखों के मसले के मुतालिक इस वक्त गौर किया जायेगा। आज हमारे सामने तमाम माइनोरटियों की सिफारिशें आई हैं लेकिन जहां तक कि सिखों का मसला है, अभी तक उसके बारे में कोई फैसला नहीं किया गया है।

अध्यक्षः माफ कीजिये। यह सवाल जिस वक्त आवेगा, उस वक्त आप इस पर जो कुछ फरमाना चाहें, वह फरमा सकते हैं।

सरदार भूपेन्द्रसिंह मानः जनाब ने फरमाया है कि अमेंडमेंट दो दिन में भेजना चाहिये लेकिन इस मामले में अभी कोई फैसला नहीं हुआ है।

अध्यक्षः जिस मामले का फैसला नहीं हुआ है, उसके बारे में आप फिर अमेंडमेंट भेज सकते हैं।

***श्री हुसैन इमामः** अध्यक्ष महोदय, मैं इस विषय पर वाद-विवाद बढ़ाना नहीं चाहता हूं। केवल दो महत्त्वपूर्ण विषयों पर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। नियम का जिस रूप में निर्माण किया गया है वह पूर्णतया व्यापक है। इससे पूर्व कि संविधान पर विचारारम्भ हो संशोधन भेजने के लिये दो दिन का समय दिया गया है।

श्रीमान् जी, आपके स्वविवेक के लिये तो अब भी बृहद् क्षेत्र है और मैं आशा करता हूं कि आप उसका उदारतापूर्वक प्रयोग करेंगे। मेरे इस कथन का यह अर्थ नहीं है कि मैं यह विश्वास नहीं करता कि आप अपने स्वविवेक का उदारतापूर्वक प्रयोग करेंगे, वरन् मेरा आशय तो यही है कि अपने मित्रों को यह विश्वास दिलाऊं कि वे भरोसा रखें कि यदि कोई जरूरी बात उठी तो आप उस पर अवश्य सहानुभूतिपूर्वक विचार करेंगे।

एक बात और है जिसके लिये मैं आपके अनुग्रह का प्रार्थी हूं। संशोधनों पर संशोधन तभी आ सकते हैं जब कि संशोधन सभा के समक्ष हों। अतः इस प्रकार के संशोधनों के बारे में आपको अपना निर्णय शिथिल करना होगा और उस काल के समाप्त हो जाने के पश्चात् भी संशोधनों पर संशोधन रखने का हमें अवसर देना होगा।

***अध्यक्षः** अवश्य।

***श्री हुसैन इमामः** तीसरी बात जिस पर मैं जोर देना चाहता हूं वह भाषा की समस्या है जिसको सुखद रूप में निपटाया जा सकता है यदि हमारे उन समस्त मित्रों की जो हिन्दी अनुवाद में रुचि रखते हैं, आरम्भ से ही एक समिति बना दी जाये और जो अनुवाद कार्य शुरू कर दे अथवा किसी हिन्दी अनुवाद को हमारे सामने उपस्थित करे। संशोधन भी हिन्दी में भेजे जा सकते हैं यदि कार्यालय उनके अंग्रेजी अनुवाद का भी हमारे लिये प्रबंध कर सके। इस प्रकार हम दोनों लक्ष्यों को प्राप्त कर सकेंगे। विधान-परिषद् द्वारा स्वीकृत किसी भी भाषा में संशोधन भेजा जा सकता है, यदि साथ ही उसका अनुवाद भी कार्यावलि में दिया जाये।

श्रीमान् जी, चौथी बात जिस पर मैं सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं यह है कि विधान तब तक के लिये बनाया जा रहा है जब तक कि वह हमारे आशय की पूर्ति करे—मैं तो यह नहीं कहूंगा कि पीढ़ियों तक के लिये बनाया जा रहा है। संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपने विधान में संशोधन किये हैं। लगभग 20 संशोधन तो हो भी चुके हैं। वहां बड़ी कठिन विधि है। आपको स्मरण होगा कि वहां केवल यही आवश्यक नहीं कि दोनों आगारों द्वारा संशोधन को स्वीकार किया जाये, बल्कि यह भी आवश्यक है कि उसे संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रत्येक इकाई भी स्वीकार करे। हमारी स्थिति इतनी बुरी नहीं है। परन्तु श्रीमान् जी, एक

[श्री हुसैन इमाम]

बात है जिसके लिये मैं आपका अनुग्रह चाहता हूं और वह है वर्तमान अथवा नये प्रान्तों की सीमा का प्रश्न।

श्रीमान् जी, विधान निर्माण के पश्चात् यह विषय इतना जटिल हो जायेगा कि इस विषय में कुछ भी करना असम्भव सा हो जायेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। यदि सभा की यह इच्छा है कि वर्तमान सीमाओं में किसी प्रकार का परिवर्तन होना चाहिये तो यह ठीक और उचित होगा कि अवकाश के पश्चात् आगामी अधिवेशन में विधान को अन्तिम रूप देने के पूर्व हम प्रान्तों के उस चित्र का कुछ अनुमान कर लें जो निकट भविष्य में होगा।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से इस सुझाव को रखने का समय अभी नहीं आया है। हमने जो कमीशन नियुक्त किया था उसकी रिपोर्ट की हम प्रतीक्षा कर रहे हैं और उसी समय हम इस पर विचार करेंगे।

***श्री हुसैन इमामः** अन्तिम रूप देने के पूर्व जब वह रिपोर्ट सामने होगी तो उसकी सिफारिशों में हम संशोधन कर सकेंगे। मैं तो सभा का ध्यान इस विषय की आवश्यकता की ओर आकर्षित करना चाहता हूं और इस ओर कि इस विषय पर पूर्ण विचार हो और इसको अन्तिम रूप दिया जाये।

श्री आर.वी. धुलेकरः श्रीमान् जी, जो केवल दो घंटे का समय कल दिन भर साधारण चर्चा के लिये हम लोगों को दिया जायेगा, उसके लिए मेरा निवेदन है कि यह समय बहुत कम है। अमेंडमेंट तो सैकड़ों आयेंगे, वह तो दूसरी बात है। लेकिन यदि प्रत्येक मेम्बर को कोई अवसर मिल जाता है अपने विचारों को प्रकट करने का तो फिर थोड़े दिनों की चर्चा के बाद जो संशोधन आते हैं, उन में परिवर्तन हो जाता है। संशोधन बहस में नहीं आते हैं। इसलिये मेरी यह प्रार्थना है कि यदि तीन-चार रोज का समय हमको दे दिया जाये और प्रत्येक सदस्य के लिये यह नियम करार दिया जाये कि वह पंद्रह मिनट से अधिक न बोले, तो प्रत्येक सदस्य को यह संतोष होगा कि उसने इस विधान के बनाने में जो उसका परिश्रम था, वह आपके सामने भवन में पेश कर दिया। इसलिये मेरी यह प्रार्थना है कि जो एक दिन का समय जो केवल पांच घंटे का है और यदि हमारे डा. अम्बेडकर साहब ने आज कहीं चार बजे इसको आरम्भ किया और कल

आधा समय उन्होंने ले लिया, तो फिर हमको कुछ समय नहीं मिलेगा। इसलिए मेरी आपसे करबद्ध प्रार्थना है कि हमको इस बड़े भारी महत्त्वपूर्ण विधान पर कहने का अवसर दिया जाये, यह विधान का अवसर बार-बार नहीं आता है और प्रत्येक मनुष्य की यह आकांक्षा होती है कि वह अपने देश और राष्ट्र के लिए जो कुछ उसको कहना है, वह कहे। मैं आपसे यह भी निवेदन करना चाहता हूं कि जो बातें हम यहां पर कहते हैं, वह बातें केवल यहां ही के लिए नहीं हैं और न वह बातें वर्तमान समय के लिए ही हैं। जो मनुष्य यहां कुछ कहते हैं, वह सौ, दो सौ, चार सौ वर्ष के बाद भी पढ़ा जाता है और लोग यह जानते हैं कि अमुक बात को हमारे पूर्वजों ने एक समय पर एक बात कही थी। उसका अर्थ हमारे सामने क्या आता है। इसलिए मैं समझता हूं कि आप, श्रीमान जी, हम सदस्यों को बड़ा ही अनुगृहीत करेंगे और कम से कम चार दिन अवश्य ही देंगे। हम प्रत्येक सदस्य केवल पंद्रह मिनट चाहते हैं और मैं आपको और सज्जनों की तरफ से भी कहना चाहता हूं कि यदि आपने हमको वह अवसर दिया तो हम एक जगह बैठ कर जो सैकड़ों संशोधन आयेंगे, उनको हम तय कर लेंगे और इस भवन के सदस्य इस बात में आपकी सहायता करेंगे कि जल्द से जल्द यह विधान बन जाये।

अध्यक्षः हम इस पर विचार कर लेंगे। जितना समय इस वक्त प्रीलिमिनरी बहस में लग रहा है, वह उस असली बहस के वक्त में से कटता जा रहा है। इसलिये मैं दरख्वास्त करूंगा कि आप मेहरबानी करके असली काम को शुरू होने देंगे।

श्री ठाकुरदास भार्गवः जनाब-माननीय प्रेजीडेंट साहब, सबसे अव्वल मैं जनाब की खिदमत में यह दर्यापत करना चाहता हूं कि आया डा. अम्बेडकर साहब ने कोई नोटिस दफा 38-एल दिया है। या कोई नोटिस उन्होंने पेश नहीं किया। अपने इस इरादे का कि वह इस कान्स्टीट्यूशन को इन्ट्रोड्यूस करना चाहते हैं। यह मैं बतौर इन्फार्मेशन पूछना चाहता हूं क्योंकि ऐसा नोटिस देना लाजिमी है। अगर नोटिस नहीं दिया गया है तो मुझे डर है कि वह मोशन ऑफ कन्सीड्रेशन नहीं कर सकते। नोटिस बरूये कायदा पांच दिन का होना चाहिये।

अध्यक्षः जी हां, उसमें आ गया है, पच्चीस तारीख के एजेंडे में आ गया है। जो रीड्राफ्ट है वह सब अमेंडमेंट फिर से लिये जायेंगे।

श्री ठाकुरदास भार्गवः दूसरी बात जो मैं आपकी खिदमत में अर्ज़ करना चाहता हूं दफा 38-एम के तहत में है। हमको ड्राफ्ट कान्स्टीट्यूशन की कापी जो रीड्राफ्ट दी गई है, वह आज उस वक्त दी गई है जब आप लंच के लिये एडजौर्न कर रहे थे, हालांकि हमको इससे बहुत पहले मिलनी चाहिये थी। मेरा जहां तक ख्याल है, सब मेम्बरान साहब को यह कापी अभी तक नहीं मिली हैं। बजरिए कायदा 38-एम अजकम तीन दिन पहले मिलना चाहिये थी; खसूसन जब कि इस कापी में बहुत से नये अमूर, मुतल्लिक नये रिपोर्ट दर्ज हैं। जब तक कि यह काफी अच्छी तरह से पढ़ी न जाये और मुताल्ला न किया जाये, तरमीम कैसे भेजी जा सकती है।

अध्यक्षः किस कापी का जिक्र आप कर रहे हैं? जो ड्राफ्ट कान्स्टीट्यूशन 26 फरवरी को आप लोगों के सामने डा. अम्बेडकर ने पेश किया था और जो बांटा गया था, उस ड्राफ्ट को वह पेश करेंगे और उसमें जो अमेंडमेंट होंगे वह बतौर अमेंडमेंट के आयेंगे और वह ड्राफ्टिंग कमेटी की तरफ से अमेंडमेंट होंगे।

श्री ठाकुरदास भार्गवः तीसरी चीज जो मैं अर्ज करना चाहता हूं वह बहुत अदब व जोर से कहना चाहता हूं। और वह 38-ओ के interpretation के मुताल्लिक है। मेरी राय में अलफाज मुदर्ज़ा 38-ओ two clear days before the day on which Constitution is to be considered का ये interpretation दुरुस्त नहीं है कि तमाम तरामीम इतवार की शाम को पांच बजे तक पहुंच जानी चाहिये। क्योंकि कान्स्टीट्यूशन सिर्फ नौ नवम्बर को ही consider न होगा। बल्कि आयन्दा भी हर तारीख पर जब तक उसके clauses पर बहस होंगी, consider किया जाता रहेगा। और आयन्दा तारीख-हाय भी ऐसे होंगे जिनकी निस्बत कहा जा सके कि फलां तारीख को Constitution consider किया जायेगा। ऐसी सूरत में मेम्बरान को पूरा हक होना चाहिये कि वे तरमीम पर बहस होने की तारीख से दो रोज पहले तक अपने तरामीम भेज सकें।

अध्यक्षः हम लोग इस मामले में अभी कोई फैसला नहीं करते।

श्री ठाकुरदास भार्गवः मैं जानता हूं कि आपकी ख्वाहिश है कि मेम्बरान को पूरा मौका बहस का दिया जाये और उनका तरामीम भेजने का हक कायम रखा जाये, और जहां तक आपके discretion के इस्तेमाल का सवाल है, सब

मुतमईन हैं, लेकिन मेरी राय नाकिस में सवाल discretion का पैदा नहीं होता, क्योंकि interpretation के रूप से जो मैं कर रहा हूं, बतौर हक के हर एक मेम्बर तरमीम भेज सकता है। यही मंशा रूल 38-पी, 38-क्यू से पाया जाता है। आपके इतवार के पांच बजे तक तरामीमें भेजने के हुक्म से एक तरह से *prima facie* फैसला मेम्बरान के खिलाफ होता है, जो मुनासिब नहीं है। यह हुक्म review होना चाहिये। अगर आप इस वक्त इस अमर का फैसला नहीं करना चाहते तो बेशक न करें। गो यह हुक्म एक तरह से incidentally इस अमर का फैसला करता है। मेरी राय नाकिस में बिला इस हुक्म को review करने के ही अगर आप बजाय सात के दस तारीख तक तौसीह फरमा दें और फिर जब मौका मरहला हो, इस सवाल का फैसला कर दें तो किसी मेम्बर को शिकायत का मौका न रहेगा।

***श्री टी. चन्निया** (मैसूर): मैं आपके सामने औचित्य प्रश्न रखना चाहता हूं। श्रीमान् जी, बहुत से माननीय सदस्य बोल चुके हैं; वे अंग्रेजी भाषा भली प्रकार जानते हैं। आपको यह सूचना देते हुये हमें बड़ा खेद है कि विशेषकर मद्रास, बंगाल, बम्बई, आसाम तथा अन्य अनेकों स्थानों से आये हुये सदस्यों में से अनेकों हिन्दी या हिन्दुस्तानी भाषा को नहीं समझ सकते हैं। हमें गूंगे मनुष्यों की भांति बैठना पड़ता है। श्रीमान् जी, आप यहां समस्त सदस्यों के हितों की रक्षा करने के लिये हैं। इसलिये मैं आप से निवेदन करूंगा कि आप उन सदस्यों से जो अंग्रेजी भाषा जानते हैं और बोल सकते हैं अंग्रेजी में ही बोलने को कहें।

विधान के मसौदे पर प्रस्ताव

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से अब हमें वाद-विवाद प्रारंभ कर देना चाहिये। मैं डा. अम्बेडकर से निवेदन करता हूं कि वे अपने प्रस्ताव को उपस्थित करें।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मसविदा समिति द्वारा तय किये हुए विधान के मसविदे को मैं सभा के समक्ष उपस्थित करता हूं और प्रस्ताव करता हूं कि इस पर विचार किया जाये।

ता. 29 अगस्त, 1947 ई. को विधान-परिषद् ने एक प्रस्ताव पास करके मसविदा समिति को नियुक्त किया था।

विधान-परिषद के निर्णयानुसार मसविदा समिति को यह भार दिया गया था कि वह परिषद् द्वारा नियुक्त विभिन्न समितियों—जैसे कि संघ-शासन-समिति,

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

संघ-विधान-समिति, प्रांतीय विधान-समिति तथा मौलिक अधिकारों, अल्पसंख्यकों, एवं कबायली क्षेत्रों के लिये नियुक्त परामर्शदातृ-समिति इत्यादि—द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर एक विधान तैयार करें।

विधान-परिषद् ने उक्त समिति को यह भी आदेश दिया था कि कतिपय विषयों में वह भारत सरकार के 1935 के एक्ट में दी हुई प्रावधानों का ही अनुगमन करे। मुझे आशा है कि सिवाय उन बातों के जिनका हवाला मैंने 21 फरवरी सन् 1948 ई. के अपने पत्र में दिया था जिसमें मैंने बताया था कि मसविदा समिति ने वहां मार्गान्तर ग्रहण किया है और क्या उसने विकल्प सुझाये हैं, आप यही पायेंगे कि मसविदा समिति ने आपके सभी आदेशों का पालन सच्चाई से किया है।

विधान का यह मसविदा जो कि मसविदा समिति के विचार-विमर्श के बाद तय हुआ है, एक महान् प्रलेख है। इसमें 315 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियां हैं यह मानना होगा कि किसी भी देश का विधान इतना बृहत् नहीं है जितना कि इस विधान का मसविदा है। जिन्होंने इसको पूरी तरह से नहीं पढ़ा है उनके लिए इसकी प्रमुख विशेषताओं को समझना कठिन है।

आज आठ महीनों से विधान का प्रस्तुत मसविदा देश के सामने है। इस दीर्घ काल में, मित्र आलोचक एवं विरोधी, सभी को इसमें दिये हुए प्रावधानों के प्रति अपने विचार व्यक्त करने के लिए काफी, बल्कि काफी से भी ज्यादा समय मिला है। मैं साहसपूर्वक कहता हूं कि बहुतों की आलोचना का कारण यह है कि वे अनुच्छेदों को पर्याप्त रूप से नहीं समझ पाये हैं और उनके अर्थ के सम्बंध में उनको गलत-फ़हमी हुई है। जो भी हो, इसकी आलोचनायें हुई हैं और उनका उत्तर देना ही होगा।

उक्त दोनों कारणों से यह आवश्यक है कि इस पर विचार करने का प्रस्ताव रखते हुए मैं विधान की मुख्य विशेषताओं की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करूं और इनके विरुद्ध की हुई आलोचनाओं का उत्तर दूं।

ऐसा करने से पहले मैं चाहता हूं कि विधान-परिषद् द्वारा नियुक्त तीन समितियों की—चीफ कमिश्नर वाले प्रान्तों की समिति, संघ तथा उसके विभिन्न इकाइयों के पारस्परिक आर्थिक सम्बंध निर्धारित करने के लिए नियुक्त विशेषज्ञ समिति एवं कबायली क्षेत्रों के लिए नियुक्त परामर्श-दातृ समिति—रिपोर्टें में सभा के समक्ष

उपस्थित करूं। ये रिपोर्टें इतने विलम्ब से निकली कि परिषद् उन पर विचार नहीं कर सकी यद्यपि इनकी प्रतियां परिषद् के सदस्यों के पास भेजी जा चुकी हैं। इन रिपोर्टों पर तथा इनमें दी हुई सिफारिशों पर मसविदा समिति विचार कर चुकी है, इसलिए यह उचित है कि यह रिपोर्टें सभा के सामने रस्मी तौर से उपस्थित कर दी जायें।

अब मैं मुख्य प्रश्न की ओर आता हूं। अगर आप इस विधान की एक प्रति विधान सम्बन्धी कानून के किसी विद्यार्थी को दें तो अवश्य ही वह दो बातें पूछेगा। पहली बात यह कि इस विधान में किस प्रकार की सरकार (Government) की कल्पना की गई है और दूसरी बात वह यह पूछेगा कि विधान का स्वरूप क्या है? क्योंकि यही दो गंभीर विषय हैं जिनके सम्बन्ध में प्रत्येक विधान को सोचना और निर्णय देना पड़ता है। अब मैं पहले प्रश्न को लेता हूं।

इस मसविदे में भारतीय संघ के प्रमुख के रूप में एक अधिकारी रखा गया है जो भारतीय संघ का प्रधान (President) कहलायेगा। इस अधिकारी की इस उपाधि से अमेरिका के प्रेसीडेंट का स्मरण हो आता है। किन्तु इस नाम-सादृश्य के अतिरिक्त, अमेरिका की सरकार के स्वरूप में तथा इस मसविदे में प्रस्तावित सरकार के स्वरूप में और कोई समानता नहीं है।

अमेरिका की सरकार का जो स्वरूप है वह प्रेसीडेंट-प्रधान है और वह प्रेसीडेंशियल सिस्टम की शासन पद्धति कही जाती है। इस मसविदे में जो शासन पद्धति प्रस्तावित की गई है, वह है पार्लियामेंटरी शासन पद्धति। शासन सम्बन्धी इन दोनों प्रणालियों में मौलिक अन्तर है। अमेरिका की प्रेसीडेंशियल पद्धति में प्रेसीडेंट अधिशासी वर्ग का प्रधान है। शासन का समस्त अधिकार उसको प्राप्त है। इस मसविदे के अनुसार हमारे प्रेसीडेंट का वही स्थान है जो अंग्रेजी विधान के अंतर्गत सम्राट का है। वह राज्य का प्रधान है, किन्तु अधिशासी वर्ग का प्रधान नहीं है। वह राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है, पर राष्ट्र पर शासन नहीं करता। वह राष्ट्र का प्रतीक है, शासन के मामले में उसका स्थान यही है कि वह अपनी मुहर की छाप से राष्ट्र के निर्णयों को ज्ञापित करता है। अमेरिकन विधान के अंतर्गत प्रेसीडेंट के अधीन कई सेक्रेटरी होते हैं जो भिन्न-भिन्न विभागों के अधिकारी होते हैं।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

इसी प्रकार भारतीय संघ के प्रेसीडेंट के अधीन शासन के विभिन्न विभागों के अधिकारी मंत्री होंगे। यहां भी इन दोनों प्रणालियों में एक मौलिक अन्तर है। अमेरिका के प्रधान के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह किसी मंत्री की राय को माने ही। किन्तु भारतीय संघ के प्रेसीडेंट के लिए अपने मंत्रियों की राय मानना साधारणत: आवश्यक होगा। वह उनकी राय के प्रतिकूल कुछ नहीं कर सकता और न बिना उनकी राय लिये ही कुछ कर सकता है। अमेरिका का प्रेसीडेंट किसी भी क्षण किसी भी मंत्री को उसके पद से हटा सकता है। किन्तु भारतीय संघ के प्रेसीडेंट को ऐसा करने का अधिकार तब तक नहीं है जब तक कि पार्लियामेंट में मंत्रियों को बहुमत प्राप्त है।

अमेरिका की प्रेसीडेंशियल प्रणाली इस आधार पर निर्मित है कि वहां अधिशासी वर्ग तथा विधान मंडल में पार्थक्य रखा गया है, जिससे कि प्रेसीडेंट और उसके मंत्री कांग्रेस के सदस्य नहीं हो सकते। अपना मसविदा इस पार्थक्य के सिद्धांत को नहीं स्वीकार करता है। भारतीय संघ के मिनिस्टर पार्लियामेंट अर्थात् विधान मंडल के सदस्य हैं। यहां तो केवल विधान मंडल के सदस्य ही मंत्री हो सकते हैं। यहां मंत्रियों को वही अधिकार प्राप्त है जो कि विधान मंडल के अन्य सदस्यों को प्राप्त है, अर्थात् वे विधान मंडल की सभा में बैठ सकते हैं, वहां के वाद-विवाद में भाग ले सकते हैं और कार्यवाही के सम्बन्ध में अपना मत दे सकते हैं। अवश्य ही ये दोनों शासन पद्धतियां गणतंत्रीय हैं और इन दोनों में किसको चुना जाये यह तय करना आसान नहीं है। गणतंत्रीय अधिशासी वर्ग (executive) के लिये यह आवश्यक है कि उसमें ये दो बातें अवश्य हों:

(1) उसमें स्थैर्य होना चाहिए और (2) उसका दायित्व पूर्ण होना नितांत आवश्यक है।

दुर्भाग्य ये अब तक ऐसी कोई प्रणाली नहीं निकाली जा सकी है जिसमें स्थिरता तथा दायित्वपूर्णता, ये दोनों ही गुण समान रूप में पाये जा सकते हों। ऐसी प्रणाली तो आप पा सकते हैं जिसमें स्थैर्य अधिक हो पर दायित्व कुछ कम हो या ऐसी प्रणाली जिसमें दायित्व कुछ अधिक मात्रा में हों पर स्थैर्य कम हो। अमेरिका की

तथा स्विट्जरलैंड की प्रणालियों में स्थैर्य अधिक है, पर दायित्व कम। इसके प्रतिकूल ब्रिटिश प्रणाली में आप दायित्व अधिक पायेंगे, पर स्थिरता कम। इसका कारण स्पष्ट है। अमेरिका का अधिशासी वर्ग पार्लियामेंटरी पद्धति का नहीं है, इसलिए उसके अस्तित्व के लिए वहां की कांग्रेस (विधान मंडल) का बहुमत अपेक्षित नहीं है। इसके प्रतिकूल ब्रिटेन का अधिशासी वर्ग पार्लियामेंटरी पद्धति का है और इसलिए अपने अस्तित्व के लिए, वह पार्लियामेंट के बहुमत पर निर्भर करता है। अमेरिकन कांग्रेस वाले अधिशासी वर्ग (executive) को बरख्वास्त नहीं कर सकती, क्योंकि वह पार्लियामेंटरी पद्धति का नहीं है।

पार्लियामेंटरी सरकार को तो उसी वक्त इस्तीफा दे देना होगा जब पार्लियामेंट के बहुमत का उस पर विश्वास न रह जाये। दायित्व के दृष्टिकोण से विधान मंडल के प्रति अ-पार्लियामेंटरी अधिशासी कम दायित्वपूर्ण होता है, क्योंकि अपने अस्तित्व के लिए वह विधान मंडल पर निर्भर नहीं रहता। इसके प्रतिकूल पार्लियामेंटरी अधिशासी विधान मंडल के प्रति अधिक दायित्वपूर्ण होता है क्योंकि उसके अस्तित्व के लिए पार्लियामेंट का बहुमत अपेक्षित है। पार्लियामेंटरी और अ-पार्लियामेंटरी पद्धतियों में यह अन्तर है कि पहली दूसरी से अधिक दायित्वपूर्ण होती है। इसके अतिरिक्त उनके दायित्व का माप-जोख कब-कब किया जाये और उसे कौन करे; इस सम्बन्ध में भी दोनों में अन्तर है। अ-पार्लियामेंटरी पद्धति में जैसी कि अमेरिका में है, अधिशासी वर्ग के दायित्व का माप-जोख एक नियमित काल के बाद हुआ करता है। वहां दो साल में एक बार निर्वाचक समुदाय अधिशासी वर्ग के दायित्व के सम्बन्ध में निर्णय करता है। उसके प्रतिकूल इंग्लैंड में जहां पार्लियामेंटरी पद्धति चलती है, नियमित काल पर और प्रत्येक दिन—दोनों तरह—अधिशासी वर्ग के दायित्व के सम्बन्ध में निर्णय किया जाता है। दैनिक निर्णय तो पार्लियामेंट के सदस्य, प्रश्न, प्रस्ताव, अविश्वास-प्रस्ताव, स्थगन-प्रस्ताव तथा अभिभाषणों (Addresses) पर वाद-विवाद द्वारा करते हैं, और नियमित काल पर जो निर्णय होता है वह निर्वाचक चुनाव के समय करते हैं जो कि हर पांचवें साल या उससे पूर्व भी हो सकता है। अमेरिकन शासन पद्धति में अधिशासी वर्ग के दायित्व की दैनिक छानबीन नहीं होती। लोगों का अनुभव है कि भारत जैसे देश में अधिशासी वर्ग के दायित्व की दैनिक छानबीन बहुत ही आवश्यक है और एक नियत कालिक छानबीन से वह कहीं अधिक प्रभावी है। प्रस्तुत विधान में स्थैर्य से दायित्व को अधिक आवश्यक समझा गया है और इसीलिए इसमें पार्लियामेंटरी पद्धति की सिफारिश की गयी है।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

यहां तक तो मैंने यह बतलाया कि प्रस्तुत विधान में कौन सी शासन पद्धति रखी गई हैं अब मैं दूसरे प्रश्न की ओर आता हूं, अर्थात् विधान के स्वरूप की ओर।

अब तक इतिहास में विधान के दो ही मुख्य स्वरूप आये हैं। एक है एकात्मक (Unitary) और दूसरा संघात्मक (Federal)। एकात्मक विधान में दो मुख्य विशेषतायें होती हैं एक तो यह कि केंद्रीय शासन नीति की उसमें प्रधानता रहती है और दूसरी विशेषता उसकी यह होती है कि उसमें उपसत्तात्मक राज्यों का कोई अस्तित्व नहीं होता, अर्थात् उसमें सत्तात्मक उपराज्य नहीं होते। इसके प्रतिकूल संघात्मक विधान की विशेषता यह है कि केन्द्र के साथ-साथ उसमें सत्तात्मक उपराज्य भी होते हैं और दोनों को ही अपने-अपने क्षेत्रों में जो उनको सौंपे गये हैं, पूर्ण सत्ता प्राप्त रहती है। दूसरे शब्दों में यह कहना चाहिए कि संघात्मक विधान का अर्थ है द्वै-राज्य की स्थापना। अपना प्रस्तुत विधान इस अर्थ में संघात्मक विधान है कि यह ऐसी राज्य व्यवस्था स्थापित करता है जिसे हम द्विमुखी राज्य-व्यवस्था कह सकते हैं प्रस्तुत विधान की द्विमुखी राज्य-व्यवस्था के अन्दर संघ राज्य है तथा अन्य प्रादेशिक राज्य हैं और इन दोनों को ही प्रभुता प्राप्त है जिसका प्रयोग ये विधान द्वारा सौंपे गये अपने-अपने विषयों में कर सकते हैं। अमेरिका की राज्य व्यवस्था भी एक द्विमुखी राज्य-व्यवस्था है जिसमें एक तरफ तो संघ सरकार है और दूसरी तरफ कई राज्य हैं, इसी तरह हमारे विधान में भी एक केन्द्रीय संघ सरकार तथा अन्य प्रादेशिक राज्यों की व्यवस्था है। अमेरिकन विधान के अनुसार, वहां की संघ सरकार, वहां के राज्यों का केवल संघ मात्र नहीं है और न-वहां के प्रादेशिक राज्य ही संघ सरकार की महज शासन सम्बन्धी इकाइयां हैं। इसी प्रकार इस विधान में प्रस्तावित संघ सरकार न केवल राज्यों का संघ मात्र है और न विभिन्न प्रादेशिक राज्य ही संघ सरकार की केवल शासनात्मक इकाइयां हैं। भारतीय और अमेरिकन विधान की समरूपता इन्हीं बातों तक सीमित है। पर इन दोनों विधानों में जो अन्तर है वह इनकी समानताओं से कहीं अधिक मौलिक और सुस्पष्ट है।

अमेरिकन संघ तथा भारतीय संघ में जो विभिन्नता है वह मुख्यतः दो बातों में है। अमेरिका में द्विमुखी राज्य-व्यवस्था के साथ-साथ दो प्रकार की नागरिकता भी है और दूसरी राज्यों को भी अपनी-अपनी नागरिकता है। अवश्य ही उस दो प्रकार की नागरिकता में जो कठिनतायें हैं उनको अमेरिकन विधान के 14वें संशोधन द्वारा बहुत कुछ दूर कर दिया गया है। इस संशोधन द्वारा राज्यों पर यह प्रतिबंध लगा दिया गया है कि वे अमेरिकन संघ के नागरिकों के अधिकार, विशेषाधिकार या विमुक्तियों का अपहरण नहीं कर सकते। पर साथ ही यह भी है, जैसा कि मि. विलियम एन्डरसन ने बताया है, कि कतिपय राजनीतिक विषयों में, जिसमें मतदान का तथा सरकारी ओहदों के धारण करने का अधिकार भी शामिल है, रियासतें अपने नागरिकों के पक्ष में भेदभाव की नीति जरूर बरतती है। बहुत से मामलों में तो यह पक्षपात बहुत दूर तक बरता जाता है। उदाहरणार्थ, किसी रियासत में या स्थानीय सरकार में नियुक्ति पाने के लिए, बहुत से स्थानों में, यह जरूरी कर दिया गया है कि उम्मीदवार वहां का ही नागरिक या निवासी हो। इसी तरह कानून और चिकित्सा सम्बन्धी सार्वजनिक पेशों का लाइसेंस पाने के लिए भी रियासत की नागरिकता या निवास प्रायः आवश्यक है। इसी प्रकार व्यवसाय में भी—जैसे कि मदिरा बिक्री का काम या बांड या स्टाक के बिक्री का काम, जहां सरकारी नियमों की कठोरता जरूरी होती है, यही प्रतिबंध लागू हैं।

प्रत्येक रियासत को उन मामलों में जो उसको सौंपे गये हैं, अपने नागरिकों को विशेष सुविधा प्रदान करने के लिये भी कतिपय अधिकार प्राप्त हैं। इस प्रकार शिकार करना और मछली मारना ये दोनों ही बातें एक तरह रियासतों के अधिकार में हैं।

वहां रियासतों में यह प्रचलित है कि वे शिकार खेलने और मछली मारने के लाइसेंस के लिये जो फीस अपने नागरिकों से लेते हैं। उससे कहीं ज्यादा बाहर वालों से लेते हैं। इसी प्रकार रियासतें अपने कॉलेज और विश्वविद्यालयों का शुल्क भी बाहर वालों से ज्यादा लेती हैं और अपने अस्पतालों या आश्रम स्थानों में भी केवल अपने नागरिकों को ही भरती करती हैं। हां, आकस्मिक या संकटकालीन स्थिति में वह बाहर वालों को भी वहां भरती कर लेती है। सारांश यह है कि

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

कई ऐसे अधिकार है जो वहां की रियासतें केवल अपने नागरिकों या निवासियों को ही देती हैं और जिन्हें वह बाहर वालों को देने से कानूनन इन्कार कर सकती है, और करती हैं, अथवा उनके अधिकारों को वे बाहर वालों को ज्यादा सख्त शर्तों पर ही देती हैं। ये सुविधाएं जो रियासत के नागरिकों को प्राप्त होती हैं, रियासत की नागरिकता के विशेषाधिकार हैं। इन सब बातों को देखते हुए, कहना होगा कि वहां रियासत के नागरिकों के एवं बाहर वालों के अधिकारों में बड़ा अन्तर है। यात्री और अस्थायी प्रवासियों को वहां सर्वत्र कुछ न कुछ विशेष असुविधाओं का शिकार होना ही पड़ता है।

इसके प्रतिकूल प्रस्तुत विधान में द्विमुखी राज्य-व्यवस्था तो रखी गई है पर नागरिकता एक ही है। इसमें समस्त भारत के लिये एक ही नागरिकता की व्यवस्था है, और वह है भारतीय नागरिकता। प्रादेशिक राज्यों की पृथक नागरिकता नहीं है। प्रत्येक भारतीय को चाहे वह किसी भी प्रादेशिक राज्य का ही, नागरिकता का समान अधिकार प्राप्त है।

प्रस्तुत भारतीय विधान में जो द्विमुखी राज्य-व्यवस्था रखी गई है वह अमेरिका की द्विमुखी व्यवस्था से एक और तरह से भी भिन्न है। अमेरिका की संघ सरकार तथा रियासतों के विधान आपस में एक ढीली गांठ से बंधे हुए हैं। इन दोनों के परस्पर सम्बंध को बताते हुए ब्राइस ने कहा है:

> ''अमेरिका की केन्द्रीय या राष्ट्रीय सरकार तथा वहां की रियासती सरकारों की तुलना हम एक विशाल इमारत तथा अन्य छोटी-छोटी अनेक इमारतों से कर सकते हैं, जो बनी तो है विशाल इमारत की आधार भूमि पर ही, लेकिन उससे भिन्न है।''

केन्द्रीय सरकार और रियासती सरकारों में क्या विभिन्नता है, इसका आभास निम्नलिखित बातों से मिलेगा।

(1) इस शर्त्त के अधीन रहते हुए कि वे गणतंत्रीय सरकार की स्थापना करेंगी, अमेरिका की प्रत्येक रियासत को अपना विधान बनाने की स्वतंत्रता है।

(2) अपना विधान बदलने का अधिकार वहां की रियासतों की जनता के हाथ में है और इस मामले में राष्ट्रीय सरकार का उन पर कोई अंकुश नहीं है।

यहां मैं पुनः मिस्टर ब्राइस के शब्दों को उद्धृत करूंगा।

''अमेरिका की प्रत्येक रियासत का अस्तित्व, उसके विधान के अनुसार एक कामनवेल्थ के रूप में है और रियासत के कानून, प्रबंध तथा न्याय सम्बन्धी सभी प्राधिकारी, रियासती विधान की प्रजा है और उसी विधान के अधीन है।''

अपने भारतीय विधान में यह बात नहीं है। यहां तो किसी भी प्रादेशिक राज्य को (भाग 1 में उल्लिखित राज्यों को तो बिलकुल ही) अपना विधान बनाने का अधिकार नहीं है। संघ एवं प्रादेशिक राज्यों के विधान का एक ही ढांचा है जिसके अन्दर ही दोनों को काम करना है और वे उसके बाहर नहीं जा सकते।

यहां तक तो मैंने आपका ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट किया कि अमेरिकन संघ और भारतीय संघ में अन्तर क्या है। किन्तु इसके अतिरिक्त प्रस्तावित भारतीय संघ में कुछ ऐसी भी विशेषताएं हैं जो अमेरिकन संघ में ही नहीं बल्कि दुनिया के अन्य किसी भी संघ राज्य में नहीं है। अमेरिकन संघ का तथा अन्य सभी संघ राज्यों का विधान एक ऐसे कठोर संघात्मक ढांचे में रखा गया है कि वे अपने स्वरूप को कभी बदल नहीं सकते चाहे कैसी भी परिस्थिति क्यों न हो। किसी भी हालत में इनकी राज्य-व्यवस्था एकात्मक या केन्द्र प्रधान नहीं हो सकती। इसके प्रतिकूल हमारा विधान समय, परिस्थिति एवं आवश्यकता के अनुसार एकात्मक या संघात्मक दोनों ही प्रकार का हो जा सकता है। यह इस प्रकार का है कि साधारण समय में राज्य व्यवस्था संघात्मक पद्धति पर चलाई जा सकती हैं किन्तु युद्ध काल में, प्रस्तुत विधान इस प्रकार का बना है कि, राज्य-व्यवस्था केन्द्रात्मक पद्धति पर चलाई जा सकती है। ज्योंही प्रधान उक्त आशय की घोषणा करेगा, जिसका कि उसे प्रस्तुत विधान के अनुच्छेद 275 के अनुसार अधिकार है, हमारी समस्त राज्य-व्यवस्था संघात्मक से बदलकर तत्क्षण केन्द्रात्मक बन जायेगी। घोषणा द्वारा भारतीय संघ, अगर वह चाहे तो ये अधिकार स्वयं अपने हाथ में ले सकता है। (1) किसी भी विषय पर कानून बनाने का अधिकार चाहे वह विषय रियासती सूची में ही हो। (2) प्रादेशिक राज्यों को, इस बात के सम्बन्ध में आदेश जारी

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

करने का अधिकार, कि वे उन मामलों में जो उनके सुपुर्द हैं, अपनी अधिशासी शक्ति (executive power) का प्रयोग किस प्रकार करें। (3) किसी प्राधिकारी को किसी भी प्रयोजन के लिये शक्ति प्रदान करने का अधिकार, तथा (4) विधान में रखी हुई अर्थ सम्बन्धी व्यवस्थाओं के स्थगन का अधिकार।

संघात्मक राज्य-व्यवस्था को बदलकर केन्द्रात्मक बनाने का अधिकार किसी भी संघ राज्य को नहीं है। हमारे विधान के अन्दर प्रस्तावित संघ राज्य में तथा अन्य संघ राज्यों में जो विभिन्नता है उसके सम्बन्ध में एक बात तो यह हुई।

किन्तु भारतीय संघ में तथा अन्य संघ राज्यों में विभिन्नता केवल इसी एक बात की नहीं है। संघ मूलक राज्य पद्धति के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह अगर बिलकुल जर्जरी भूत नहीं तो एक दुर्बल व्यवस्था अवश्य है। कहा जाता है कि उसमें दो कमजोरियां हैं। एक कमजोरी तो यह है कि उसमें बड़ी अपरिवर्तनशीलता तथा वैधावैध विचार बाहुल्यता है। यह निर्विवाद कि संघ मूलक राज्य-व्यवस्था में ये दोनों त्रुटियां स्वाभाविक हैं। संघात्मक विधान स्वाभाविक है कि, लिपिबद्ध विधान होगा और लिपिबद्ध विधान की अपरिवर्तनशीलता निश्चित है। संघात्मक विधान में सत्ता संघ सरकार और रियासतों के बीच बंट जाती है और इस बंटवारे का सम्पादन स्वयं विधान के कानून द्वारा होता है। इस सत्ता विभाजन के फलस्वरूप दो बातें निश्चित हैं। एक तो यह कि अगर संघ सरकार उन मामलों में हस्तक्षेप करे जिनके सम्बन्ध में सत्ता रियासतों को प्राप्त है अथवा कोई रियासत उन मामलों में हस्तक्षेप करे जिनके सम्बन्ध में सत्ता संघ सरकार को प्राप्त है तो यह विधान का उल्लंघन करना है और दूसरी बात यह कि ऐसे विधानोल्लंघन के सम्बन्ध में न्याय सम्बन्धी कार्रवाई की जा सकती है और इसके सम्बन्ध में निर्णय केवल न्याय विभाग ही दे सकता है। संघ व्यवस्था का जब यह स्वरूप है तो संघात्मक विधान वैधावैध विचार बाहुल्यता के दोषारोप से नहीं बच सकता। संघात्मक विधान की ये त्रुटियां अमेरिकन विधान में सुस्पष्ट हैं।

जिन देशों ने बाद में चल कर संघात्मक पद्धति अपनाई है, उन्होंने संघात्मक प्रणाली की अन्तर्वर्ती अपरिवर्तनशीलता एवं वैधावैध विचार बाहुल्यता के फलस्वरूप पैदा होने वाले दोषों को लघु करने का प्रयास किया है। उदाहरण के रूप में आस्ट्रेलियन विधान का यहां उल्लेख किया जा सकता है। अपनी संघ व्यवस्था की अपरिवर्तनशीलता को कम करने के लिए आस्ट्रेलियन विधान ने इन उपायों का प्रयोग किया है:

(1) विधान ने कामनवेल्थ की पार्लियामेंट को समवर्ती विधि निर्माण की व्यापक शक्ति प्रदान की है और पृथक विधि निर्माण की अल्पशक्ति प्रदान की है, और

(2) विधान के कतिपय अनुच्छेदों को अल्पकालिक अवधि का बना दिया है और वे तभी तक प्रभावी रहेंगे जब तक कि पार्लियामेंट अन्यथा व्यवस्था न करे।

यह स्पष्ट है कि आस्ट्रेलिया विधान के अनुसार वहां की पार्लियामेंट बहुत से काम कर सकती है जो अमेरिकन कांग्रेस की क्षमता से बाहर की बात है और जिन्हें करने के लिये अमेरिकन सरकार को सुप्रीम कोर्ट का ही सहारा लेना होगा और वहां भी उसे सफलता तभी मिल सकती है जब कि वह अपनी योग्यता, बुद्धि-कौशल से ऐसे सिद्धांत का प्रतिपादन कर सके जो उस मामले में उसके अधिकार प्रयोग का औचित्य प्रमाणित करता हो।

संघात्मक व्यवस्था की अपरिवर्तनशीलता एवं वैधावैध विचार बाहुल्यता की कठिनाई को कम करने के लिये प्रस्तुत विधान ने आस्ट्रेलियन प्रणाली को अपनाया है और इतनी दूर तक जहां तक कि स्वयं आस्ट्रेलिया भी नहीं गया है। आस्ट्रेलियन विधान की तरह अपने विधान में भी उन विषयों की सूची बड़ी लम्बी है जिनके सम्बन्ध में विधि निर्माण का समवर्ती अधिकार है। आस्ट्रेलियन विधान में ऐसे 39 विषय हैं और अपने विधान में इनकी संख्या 37 है। आस्ट्रेलियन विधान का अनुगमन करते हुए हमने अपने विधान में भी 6 ऐसे अनुच्छेद रखे हैं जिनमें दी हुई व्यवस्थाएं अल्पकालिक अवधि की हैं जिनके स्थान पर किसी भी समय विधान मंडल अवसरानुकूल अन्य व्यवस्थाएं रख सकता है। प्रस्तुत विधान आस्ट्रेलियन विधान से भी जिस बात में आगे बढ़ गया है, वह यह है कि अपने विधान मंडल को कई विषयों में विधि निर्माण का एकमात्र अधिकार प्राप्त है। जब कि आस्ट्रेलियन पार्लियामेंट का विधि निर्माण का एकमात्र अधिकार केवल तीन विषयों तक ही सीमित है, भारतीय विधान-मंडल को, प्रस्तुत विधान के अनुसार, ऐसा अधिकार 91 विषयों के सम्बन्ध में प्राप्त है। इस प्रकार प्रस्तुत विधान ने अपनी संघात्मक राज्य व्यवस्था को, जो स्वभावतः बेलोच मानी जाती है, अधिक से अधिक लचीली बना दिया है।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

यही कहना काफी नहीं है कि प्रस्तुत विधान ने आस्ट्रेलियन विधान का अनुगमन किया है या यह कि बड़े व्यापक पैमाने पर उसका अनुगमन किया है। इसमें जो विशेष बात है वह यह है कि, संघात्मक व्यवस्था की अन्तर्वर्ती त्रुटि—अपरिवर्तनशीलता और वैधावैध विचार बाहुल्यता को दूर करने के लिए इसने नवीन उपाय निकाले हैं और यह विशेषता उसकी अपनी है और अन्यत्र कहीं नहीं पाए जा सकते।

पहला उपाय यह है कि विधान ने विधान मंडल को यह अधिकार प्रदान किया है कि वह साधारण समय में एकमात्र प्रान्तीय विषयों के सम्बन्ध में विधि निर्माण कर सकता है। मेरा संकेत है अपने विधान के अनुच्छेद 226, 227 तथा 229 की ओर। अनुच्छेद 226 के अनुसार किसी विषय के सम्बन्ध में यद्यपि वह ''राज्य सूची'' में है, संघीय विधान मंडल विधि निर्माण कर सकता है जब कि वह विषय केवल प्रान्तीय महत्त्व का न रह कर राष्ट्रीय महत्त्व का हो जाये। पर इस सम्बन्ध में शर्त यह है संघीय विधान मंडल ऐसे विषय के सम्बन्ध में विधि निर्माण तभी कर सकता है जब कि ऊपर की सभा दो तिहाई बहुमत से इसके पक्ष में प्रस्ताव पास कर दे। अनुच्छेद 227 में राष्ट्रीय संकट की स्थिति के लिए संघीय विधान मंडल को इसी प्रकार का अधिकार दिया गया है। अनुच्छेद 229 के अनुसार यदि प्रांत इस बात से सहमत हों तो यही अधिकार संघीय विधान मंडल को प्राप्त है। यह अंतिम प्रावधान आस्ट्रेलियन विधान में भी अवश्य है पर ऊपर वाले दोनों प्रावधान भारतीय विधान के मसविदे की अपनी मुख्य विशेषता हैं।

संघात्मक विधान की परिवर्तनशीलता और उसके वैधावैध विचार बाहुल्यता को दूर करने का दूसरा उपाय जो इस विधान में अपनाया गया है, वह यह है कि विधान में सुविधापूर्वक संशोधन करने के प्रावधान इसमें रखे गये हैं संशोधन सम्बन्धी प्रावधान विधान के अनुच्छेदों को दो विभिन्न भागों में बांट देते हैं। एक भाग में वे अनुच्छेद आते हैं जिनका सम्बन्ध, विधि निर्माण सम्बन्धी शक्तियों का केन्द्र और राज्यों के बीच बंटवारा, संघीय विधान मण्डल में राज्यों के प्रतिनिधान तथा न्यायालयों के अधिकारों से है। दूसरे सभी अनुच्छेद दूसरे भाग में आते हैं। विधान का एक वृहत् अंश, दूसरे भाग में आने वाले अनुच्छेदों के अन्तर्गत आ जाता

है और संघीय विधान मंडल द्वारा दोहरे बहुमत से उसमें संशोधन किया जा सकता है। अर्थात् प्रत्येक सभा के उपस्थित एवं मतदान करने वाले सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से तथा प्रत्येक सभा की समस्त सदस्य संख्या के बहुमत से उसमें संशोधन किया जा सकता है। इन अनुच्छेदों में किये गये संशोधनों के लिए राज्यों का अनुमोदन अपेक्षित नहीं है। जो अनुच्छेद पहले भाग में आते हैं, केवल उन्हीं से सम्बन्ध रखने वाले संशोधनों के लिए ही संरक्षण के रूप में राज्यों का अनुमोदन आवश्यक रखा गया है।

इसलिए निश्शंक होकर यह कहा जा सकता है कि भारतीय संघ को अपरिवर्तनशीलता और वैधावैध विचार बाहुल्यता की त्रुटियों से कोई कठिनाई न होगी। इसकी मुख्य विशेषता यही है कि यहां की संघात्मक व्यवस्था लचीली होगी।

प्रस्तावित भारतीय संघ की एक और विशेषता है जिसके कारण यह और संघ राज्यों से भिन्न है। संघात्मक राज्य का आधार है द्विमुखी राज्य-व्यवस्था, जिनके बीच विधि-निर्माण, शासन प्रबंध एवं न्याय संबंधी समस्त अधिकार बंटे रहते हैं। इस अधिकार-विभाजन का अनिवार्य परिणाम यह होता है कि कानून, शासन एवं न्याय के संबंध में राज्य में एकरूपता नहीं रहती, विभिन्नता पैदा हो जाती है। यह विभिन्नता किसी हद तक तो उपेक्षणीय होती हैं बल्कि किसी हद तक वह अभिनन्दनीय हो सकती है, क्योंकि उसमें स्थानीय आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुसार शासन-शक्तियों को उपयोगी बनाने का प्रयास किया जाता है। किन्तु जब यह विभिन्नता एक निश्चित सीमा से आगे चली जाती है तो उसमें अव्यवस्था पैदा हो जा सकती है और कई संघ राज्यों में इससे अव्यवस्था उत्पन्न हुई भी है। मान लीजिए हमारे संघ में 20 प्रादेशिक राज्य हैं। अब आप जरा कल्पना करें कि हमारे यहां विवाह, तलाक, उत्तराधिकार के परिवार संबंध, संविदा, शारीरिक या साम्पत्तिक क्षति, अपराध, माप, बिल और चेक, बैंकिंग और व्यवसाय न्यायप्राप्ति की पद्धति तथा शासन संबंधी पद्धति एवं व्यवस्था के संबंध में 20 भिन्न-भिन्न कानून हैं तो यह विभिन्नता कितनी असुविधाजनक है। यह स्थिति न केवल राज्य को ही कमजोर बनाती है बल्कि यह नागरिकों के लिए असह्य हो जाती है। वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचते हैं तो यह पाते हैं कि पहले

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

स्थान पर जो वैध था, वह यहां अवैध है। इस मसविदे ने ऐसे उपाय और प्रणालियों का अवलम्बन किया है जिन से भारतीय राज्य संघात्मक राज्य होने के साथ-साथ, उन सभी मामलों में, एकरूपता रखेगा, जो राज्य की एकता को स्थिर रखने के लिए आवश्यक है। इस प्रयोजन के लिए मसविदे में निम्नलिखित तीन उपाय अपनाये गये हैं:

(1) राज्य भर में एक न्यायव्यवस्था।

(2) मौलिक विधियो तथा व्यवहार एवं दण्ड सम्बन्धी विधियों में एकरूपता। और

(3) आवश्यक पदों पर नियुक्ति के लिए समस्त देश में एक लोक सेवा।

संघात्मक राज्य में द्विमुखी राज्य-व्यवस्था का होना निश्चित है और ऐसी द्विमुखी राज्य-व्यवस्था के अन्दर न्याय, विधि-संहिता तथा लोक सेवा इन तीनों में द्वित्व का आना, जैसा मैं पहले बता चुका हूं, स्वाभाविक है। अमेरिका में संघीय न्यायालय तथा राज्यों के न्यायालय दोनों एक दूसरे से पृथक और स्वतंत्र हैं। भारतीय संघ में द्विमुखी राज्य-व्यवस्था तो है, पर उसमें न्याय व्यवस्था दो प्रकार की नहीं होगी, इसमें एकरूपता ही रहेगी। विभिन्न उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय दोनों संयुक्त रूप में एक अखण्ड अविभाज्य न्यायालय हैं जिन्हें सांवेधानिक विधि, व्यवहार विधि एवं दण्ड विधि से सम्बन्ध रखने वाले सभी मामलों में सुनवाई का तथा व्यवस्था देने का अधिकार रहेगा। ऐसा इसलिए किया गया है कि न्यायालयों के फैसलों में उनकी व्यवस्थाओं में विभिन्नता न रहे।

एकमात्र कैनाडा ही एक ऐसा देश है जहां ऐसी समानान्तर व्यवस्था है। आस्ट्रेलिया की व्यवस्था केवल इसके निकट तक पहुंच पाती है।

इस बात का प्रयास किया गया है कि कानूनों में जो कि नागरिक और सामाजिक जीवन के आधार हैं, कोई विषमता न रहने पाये। व्यवहार एवं दण्ड विधि संहिता को—जैसे कि व्यवहार एवं दण्ड सम्बन्धी विधियों को—जैसे कि दीवानी और फौजदारी के कानून एवं साक्ष्य, सम्पत्ति हस्तान्तरण, विवाह, तलाक तथा उत्तराधिकार

सम्बन्धी कानूनों को समवर्ती सूची में रखा है, जिससे कि संघीय प्रणाली को बिना कोई क्षति पहुंचाए, इन सभी बातों में एकरूपता रखी जा सके।

द्विमुखी राज्य-व्यवस्था में, जो संघात्मक शासन पद्धति का अन्तर्वर्ती अंग है, जैसे मैं कह चुका हूं, राजकीय सेवाओं (services) में विषमता का होना स्वाभाविक है। सभी संघ राज्यों में संघीय लोक सेवा तथा राज्यों की लोक सेवा, ये दो सेवाएं होती हैं। भारतीय संघ में भी यद्यपि यहां भी द्विमुखी राज्य-व्यवस्था है, दो ही सेवाएं होंगी, पर उसमें एक अपवाद है। यह मानी हुई बात है कि सभी देशों में शासन सम्बन्धी कितने ही ऐसे पद होते हैं, जो शासन-स्तर को समुन्नत रखने के विचार से बहुत महत्त्वपूर्ण कहे जा सकते हैं। इतने विशाल और जटिल शासन-व्यवस्था में ऐसे कौन-कौन से ओहदे हैं यह बताना तो आसान नहीं है, पर इसमें कोई शक नहीं कि शासन-स्तर उन राजकीय कर्मचारियों की योग्यता पर ही निर्भर करता है जो इन महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किये जाते हैं। सौभाग्य से हमने अपने पूर्ववर्ती सरकार से ऐसी शासन पद्धति प्राप्त की है जो समस्त देश में एक सी है और हमें यह मालूम है कि वह महत्त्वपूर्ण पद कौन-कौन से हैं। प्रस्तुत विधान में इस बात की व्यवस्था है कि प्रादेशिक राज्यों को अपनी लोक सेवा की रचना के अधिकार से वंचित न करते हुए एक अखिल भारतीय लोक सेवा रखी जायेगी, जिसमें समस्त देश से समान योग्यता के व्यक्तियों को समान वेतन तालिका पर भरती किया जायेगा और इस लोक सेवा के सदस्य ही समूचे संघ में सभी महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किये जायेंगे।

अपने प्रस्तावित संघ की मुख्य विशेषताएं यही हैं, जिनका मैंने पहले उल्लेख किया है। अब मैं उन आलोचनाओं की ओर आता हूं, जो इसके सम्बन्ध में की गई हैं।

यह कहा गया है कि विधान के इस मसविदे में कोई भी नई बात नहीं है। इसमें से करीब आधा तो भारत सरकार के सन् 1935 के एक्ट से ही लेकर ज्यों का त्यों रख दिया गया है और शेष विभिन्न देशों के विधान से लिया गया है। इसमें अपनी मौलिकता बहुत कम है।

मैं पूछना चाहता हूं विश्व के इतिहास के वर्तमान काल में जो विधान बनाया जायेगा उसमें आखिर कोई क्या नई बात हो सकती है? आज करीब एक शताब्दि से कुछ अधिक समय बीत गया जबकि विश्व का पहला लिपिबद्ध विधान बना था। तब से इसी प्रथम विधान के आधार पर बहुत से देश अपने-अपने विधान

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

का निर्माण करते आ रहे हैं। विधान के दायरे में क्या-क्या बातें आनी चाहिएं, यह बात बहुत पहले ही तय हो चुकी है। इसी प्रकार सारी दुनियां में यह बात भी मान ली जा चुकी है, स्वीकार कर ली गयी है कि विधान की बुनियादी बातें क्या हैं। इन सर्वसम्मत सिद्धांतों के आधार पर जो भी विधान बनेंगे उनमें मुख्य-मुख्य प्रावधानों के सम्बन्ध में निश्चय ही सादृश्य होगा। इस युग में, इतने विलम्ब से जो विधान बनेगा उसमें अगर किसी नई बात का समावेश किया जा सकता है तो वह केवल इसी अभिप्राय से किया जा सकता है कि प्राचीन विधानों की त्रुटियों को दूर कर उसे देश की वर्तमान आवश्यकता के अनुरूप बनाया जाये। प्रस्तुत विधान अन्य देशों के विधानों की केवल नकल मात्र है, इस आरोप का निश्चय ही यही कारण है कि आलोचकों का विधान विषयक अध्ययन अपर्याप्त है। मैं यह बतला चुका हूं कि अपने विधान के मसविदे में नई बात क्या है और मुझे विश्वास है कि जिन लोगों ने अन्य देशों के विधानों का अध्ययन किया है, और इस विषय पर तटस्थ हो, शांत चित्त हो, विचार करने के लिए तैयार हैं, वे यह मानेंगे कि मसविदा-समिति पर कदापि यह दोषारोप नहीं किया जा सकता है कि विधान निर्माण में उसने आंख बंद कर गुलामों की भांति और विधानों की नकल की है जैसा कि उसके विरुद्ध कहा जाता है।

इस अभियोग के सम्बन्ध में कि इस मसविदे में भारत सरकार के 1935 के एक्ट का ही एक वृहत अंश रख दिया गया है, मुझे क्षमाप्रार्थी होने की कोई आवश्यकता नहीं। कहीं से भी कोई चीज ली जाये, इसमें लज्जित होने का कोई कारण नहीं है। यह कोई साहित्यिक चोरी नहीं है। विधान की बुनियादी बातों के लिए किसी व्यक्ति को भी एकाधिपत्य नहीं प्राप्त है। मुझे दुख इस बात का है कि भारत सरकार के 1935 के एक्ट से जो प्रावधान लिये गये हैं, अधिकांशत: उनका सम्बन्ध शासन के विस्तार की बातों से है। मैं मानता हूं कि विधान में शासन सम्बन्धी ब्यौरों का कोई उल्लेख नहीं होना चाहिए। स्वयं मुझे बड़ी प्रसन्नता होती अगर मसविदा-समिति ऐसा मार्ग निकाल पाती जिससे विधान में ये बातें न शामिल की जाती। पर आवश्यकतावश इन्हें शामिल करना ही पड़ा और उनको विधान में रखने का यही औचित्य है। ग्रीस के प्रसिद्ध इतिहास-वेत्ता श्री ग्रोट ने कहा है: किसी भी स्वतंत्र और शांतिपूर्ण सरकार के लिए यह अनिवार्य रूप से आवश्यक

है कि वैधानिक नैतिकता का प्रसार न केवल वहां के बहुसंख्यक लोगों में ही बल्कि देश के समस्त नागरिकों में किया जाये, क्योंकि कोई भी शक्तिशाली और दु:साध्य, हठी अल्पमत वाला वर्ग, चाहे वह स्वयं इतना शक्ति सम्पन्न न हो कि शासन की बागडोर अपने हाथ में ले सके, पर स्वतंत्र-शासन का कार्य संचालन दुरूह या कठिन तो बना ही सकता है।

वैधानिक नैतिकता से ग्रोट का अभिप्राय यह है:

''विधान के स्वरूपों के प्रति ऐसी परम श्रद्धा हो जो उन स्वरूपों के अधीन रखकर और उनके अंतर्गत कार्य करने वाले प्राधिकारियों की आज्ञाओं को मनवाती हो, किन्तु साथ ही निश्चित विधि-प्रतिबंधों के अधीन भाषण तथा कार्य स्वातंत्र्य की वृत्ति पैदा करती हो और साथ-साथ उन्हीं प्राधिकारियों के लोक-कार्यों के बारे में अवाधित आलोचना की सुविधा देती हो और इसके साथ ही प्रत्येक नागरिक के मन में यह विश्वास भी पैदा करती हो कि दल-संघर्ष-जनित-कटुता के होते हुए भी संविधान के स्वरूपों के प्रति उसके विरोधियों के हृदय में वही आदर होगा जो उसके हृदय में है।''

इस बात को प्रत्येक व्यक्ति स्वीकार करता है कि प्रजातंत्रात्मक विधान को शक्ति पूर्वक चलाने के लिए नैतिकता का प्रसार आवश्यक है, किन्तु इससे परस्पर सन्नद्ध दो बातें हैं जिन्हें दुर्भाग्य से लोग नहीं जानते। उनमें एक तो यह है कि शासन पद्धति का विधान पद्धति से बड़ा सन्निकट सम्बंध है। शासन पद्धति भाव और स्वरूप दोनों की ही दृष्टि से विधान पद्धति के अनुरूप होनी चाहिये। दूसरी बात यह है कि विधान के स्वरूप को बदले बिना ही, केवल शासन प्रणाली में परिवर्तन करके विधान को पूर्णत: उलट देना, तथा शासन को विधान की भावना के अनुरूप और प्रतिकूल बना देना बिलकुल सम्भव है इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि केवल वहीं पर जहां लोगों में वैधानिक नैतिकता का प्रसार है जैसा कि उपरोक्त इतिहासवेत्ता ने बताया है, इस बात की जोखिम उठाई जा सकती है कि शासन के विस्तार की बातों को विधान में न रख कर उन्हें विधान मण्डल पर छोड़ दिया जाये। अब प्रश्न यह है कि क्या वैधानिक नैतिकता का प्रसार हम सम्भव मानते हैं? वैधानिक नैतिकता की भावना स्वाभाविक, प्रकृति जन्य नहीं होती। इसे तो अभ्यास द्वारा अपनाना होगा। हमें यह जानना चाहिए कि हमारे देशवासियों को अभी भी इसे सीखना है। भारतीय भूमि स्वभावत: ही अप्रजातंत्रात्मक है, और यहां प्रजातंत्र केवल एक ऊपरी आवरण है।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

ऐसी परिस्थिति में शासन सम्बन्धी नियमों को निश्चित करने का काम विधान मंडल पर न छोड़ना ही श्रेयस्कर है। यही कारण है कि प्रस्तुत विधान में इन नियमों को स्थान दे दिया गया है।

इस मसविदे के विरुद्ध दूसरी आलोचना यह की गई है कि इसमें कहीं भी भारत की प्राचीन राजनीति को कोई स्थान नहीं दिया गया है। यह कहा जाता है कि इस नवीन विधान का निर्माण प्राचीन हिन्दू राज्य परम्परा के आधार पर होना चाहिए था और इसमें पाश्चात्य राजनीतिक सिद्धांतों का समावेश न कर, ग्राम और जिला पंचायतों की भित्ति पर इसे खड़ा करना चाहिए था। कुछ ऐसे लोग भी हैं जिनकी विचारधारा बहुत आगे—अति की ओर—चली गई है। वे कोई भी केन्द्रीय या प्रान्तीय शासन नहीं चाहते। वे चाहते हैं कि भारत में केवल ग्राम सरकारें हों। बुद्धि सम्पन्न भारतीयों का ग्राम समाज के प्रति जो प्रेम है वह यदि कारुणिक नहीं तो असीम तो अवश्य ही है। (*हंसी*) इस मनोवृत्ति का बहुत कुछ कारण तो यह है कि श्री मेटकाफ ने जो ग्राम समाज का स्तुतिगान किया है इसमें वे प्रभावित हैं। मेटकाफ ने ग्रामों का वर्णन करते हुए कहा है कि वे छोटे-छोटे प्रजातंत्र थे जिनमें अपनी आवश्यकता की सभी वस्तुएं उपलब्ध थीं और जो वैदशिक सम्बंध स्थापित करने से प्राय: मुक्त थे। मेटकाफ की राय यह है कि सभी क्रांतियों एवं परिवर्तनों में, जिनसे कि यहां की जनता को कष्ट भोगना पड़ा, भारतीय जनसमुदाय की रक्षा में और कोई भी बात उतनी सहायक नहीं हुई है जितना कि इन ग्राम पंचायतों का अस्तित्व जो छोटे-छोटे स्वतंत्र राज्यों के रूप में वर्तमान थे, और उनके मतानुसार ये ग्राम पंचायतें बहुत हद तक भारतीयों के सुख में एवं उनके स्वातंत्र्य उपभाग में सहायक हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि जहां और सभी कुछ विनष्ट हो गए हमारा ग्राम समुदाय आज भी वर्तमान है। किन्तु जो लोग इन ग्रामों पर गर्व करते हैं, वे इस बात का विचार ही नहीं करते कि आखिर देश के भाग्य निर्माण में तथा उसके कार्यकलाप में इन ग्रामों ने कितना कम हाथ बटाया है और क्यों? देश के भाग्य निर्माण में इन्होंने क्या भाग लिया है इसका अच्छा वर्णन भी मेटकाफ ने स्वयं किया है। वह कहता है:

> ''कितने ही राजवंश आए और गये, कितनी ही क्रांतियां हुईं, हिन्दू, पठान, मुगल, मराठा, सिख, अंग्रेज—सभी बारी-बारी से देश के मालिक बने, किन्तु यहां की ग्राम पंचायतें सदा ज्यों की त्यों बनी रहीं। जब-जब युद्ध हुए, संकट आए, इन्होंने अपने को हथियार बन्द किया, अपनी किले बन्दी की। विरोधी सेना

जब इनके प्रदेश में पहुंची तो इन्होंने अपने मवेशियों को चहार-दीवारी में इकट्ठा कर दिया और शत्रु को बिना रोके बढ़ जाने दिया।''

हमारी ग्राम पंचायतों ने देश के इतिहास में यही ज्वलंत काम किया है। इसे जानते हुए हमें उनके लिए आखिर क्या गर्व हो सकता है। यह बात सच हो सकती है कि भयंकर उथल-पुथल के होते हुए भी ये जीवित रह गयीं किन्तु केवल जीवित रहने का क्या मूल्य है? प्रश्न तो यह है कि किस स्तर पर ये जीवित रही? निश्चय ही बड़े निम्न और स्वार्थपूर्ण स्तर पर ये जीवित रही? मेरा मत है कि ये ग्राम पंचायतें ही भारत की बर्बादी का कारण रही हैं। इसलिए मुझे आश्चर्य होता है कि जो लोग प्रांतीयता की, साम्प्रदायिकता की निन्दा करते हैं, वही ग्रामों की इतनी प्रशंसा कर रहे हैं। हमारे ग्राम हैं क्या? ये कूप मण्डूकता के परनाले हैं, अज्ञान, संकीर्णता एवं साम्प्रदायिकता की काली कोठरियां हैं। मुझे तो प्रसन्नता है कि विधान के मसविदे में ग्राम को अलग फेंक दिया गया है और व्यक्ति को राष्ट्र का अंग माना गया है।

विधान के मसविदे की इसलिए भी आलोचना की गयी है कि इसमें अल्पसंख्यकों के संरक्षण की व्यवस्थायें रखी गयी हैं। इसके लिए मसविदा-समिति जिम्मेदार नहीं है। इसे तो विधान-परिषद् के निर्णयों के अनुसार चलना था। जहां तक मेरे निजी मत की बात है, मैं कह सकता हूं कि विधान-परिषद् ने अल्पसंख्यकों के संरक्षण की व्यवस्था करके अवश्य ही बुद्धिमानी का काम किया है। इस देश के बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक, दोनों ही वर्ग एक गलत रास्ते पर चले हैं। बहुसंख्यक वर्ग की यह गलती है कि उसने अल्पसंख्यक वर्ग का अस्तित्व नहीं स्वीकार किया और इसी प्रकार अल्पसंख्यक वर्ग की यह गलती है कि उसने अपने को सदा के लिए अल्पसंख्यक बनाये रखा। अब एक ऐसा मार्ग निकालना ही होगा जिससे ये दोनों गलतियां दूर हों। मार्ग ऐसा होना चाहिए जो अल्पसंख्यकों का अस्तित्व मान कर इस सम्बन्ध में आगे बढ़े। और साथ ही मार्ग ऐसा भी हो जिससे कि एक दिन अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक दोनों ही वर्ग—आपस में मिलजुल कर—एक हो जाये। इस सम्बन्ध में विधान-परिषद् ने जो उपाय रखा है वह निःसंदेह अभिनन्दनीय है, क्योंकि इससे हमारे उपरोक्त दोनों ही उद्देश्य सिद्ध हो जाते हैं।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

दो बातें मैं उन कट्टर प्राचीन पंथियों को कहना चाहता हूं जिन्होंने अल्पसंख्यकों के संरक्षण के विरुद्ध एक हठधर्मिता का भाव अपना लिया है। एक बात उनसे यह कहना चाहता हूं कि अल्पसंख्यक एक भयंकर विस्फोट पदार्थ के समान होते हैं, जो अगर फटा तो सारे राजकीय ढांचे को तहस-नहस कर सकता है। यूरोप का इतिहास इस बात का एक ज्वलंत प्रमाण है। दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूं कि भारत का अल्पसंख्यक समुदाय इस बात पर सहमत हो गया है कि वह अपने अस्तित्व को बहुसंख्यक समुदाय को सौंप दे। आयरलैंड का विभाजन रोकने के लिए जो बातचीत चली थी उसके सिलसिले में श्री रेडमांड ने मि. कारसन से यह कहा था: ''प्रोटेस्टेंट अल्पसंख्यकों के लिए आप जो भी संरक्षण चाहते हों मांग लें, किन्तु आयरलैंड को हमें अखंड रखना चाहिए।'' इसके जवाब में कारसन ने कहा था: ''चूल्हे में जायें आप के संरक्षण; हम आप से शासित होना नहीं चाहते।'' भारत के किसी भी अल्पसंख्यक समुदाय ने यह रुख नहीं अपनाया है—उन्होंने बहुसंख्यक समुदाय के शासन को निष्ठापूर्वक स्वीकार कर लिया है, यहां का बहुसंख्यक वर्ग सम्प्रदाय के आधार पर बहुसंख्यक है, न कि किसी राजनैतिक सिद्धांत के आधार पर। बहुसंख्यक वर्ग का यह फर्ज है कि अल्पसंख्यकों के प्रतिकूल वह कोई भेदभाव न बरते। बहुसंख्यक वर्ग को अपने इस फर्ज का ख्याल रखना चाहिए। अल्पसंख्यक वर्ग इसी प्रकार अपना पृथक अस्तित्व बनाये रहेगा या अपने को राष्ट्र में विनिमर्ज्जित कर देगा। यह बात निर्भर करती है बहुसंख्यक वर्ग के व्यवहार पर। जिस क्षण बहुसंख्यक वर्ग अल्पसंख्यकों के प्रति भेदभाव बरतने की आदत छोड़ देगा, उसी क्षण अल्पसंख्यकों के अस्तित्व का आधार जाता रहेगा और वे लुप्त हो जायेंगे।

सर्वाधिक आलोचना हुई है विधान के मसविदे के उस भाग की जिसमें मौलिक अधिकारों का उल्लेख है। कहा जाता है कि अनुच्छेद 13 में, जिसमें मौलिक अधिकारों की व्याख्या की गई है; इतने अधिक प्रतिबंध रख दिये गये हैं कि इनके कारण मौलिक अधिकारों का कोई मूल्य नहीं रह जाता। इसकी इतनी निन्दा की गई है कि इसे एक प्रकार का छल कहा गया है। आलोचकों की राय में मौलिक अधिकार तब तक मौलिक अधिकार नहीं हैं जब तक कि वे सर्वथा

सम्पूर्ण प्रतिबंध शून्य न हों। अपने मत के समर्थन में आलोचकवृन्द अमेरिका के विधान का तथा उस विधान के प्रथम दस संशोधनों में दिये हुये अधिकार-पत्र (Bill of Rights) का सहारा लेते हैं। यह कहा गया है कि अमेरिका के मौलिक अधिकार, जो कि अधिकार-पत्र में दिये गये हैं, वास्तविक है; क्योंकि उन्हें किसी प्रतिबंध के अधीन नहीं रखा गया है।

मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि मौलिक अधिकारों के सम्बन्ध में की गई यह सारी आलोचना एक मिथ्या धारणा के आधार पर की गई है। पहली बात तो यह है कि मौलिक एवं अमौलिक अधिकारों में क्या अन्तर होना चाहिये, इस प्रसंग में जो आलोचना की गई है, वह तथ्यपूर्ण नहीं है। यह कहना गलत है कि मौलिक अधिकार सर्वथा संपूर्ण प्रतिबन्ध शून्य होते हैं और अन्य अधिकार अवाध नहीं होते। इन दोनों में वास्तविक अन्तर यह है कि मौलिक अधिकार कानून की देन है, जब कि अन्य अधिकार विभिन्न दलों के पारस्परिक समझौते के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं चूंकि मौलिक अधिकार राज्य की देन हैं, इसलिये राज्य उनके सम्बन्ध में कोई प्रतिबंध नहीं रख सकता, ऐसा अर्थ लगाना भूल है।

दूसरी बात यह है कि अमेरिका के मौलिक अधिकार अवाध हैं, यह कहना गलत है। अमेरिकन विधान में तथा प्रस्तुत विधान में केवल रूप का अन्तर है, आशय का नहीं। यह बात निर्विवाद है कि अमेरिका के जो मौलिक अधिकार हैं, वह अवाध नहीं हैं अपने विधान के मसविदे में मौलिक अधिकारों के सम्बन्ध में जो प्रतिबंध रखे गये हैं, उनमें से प्रत्येक के समर्थन में अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के कम से कम एक निर्णय का हवाला तो दिया ही जा सकता है। इस मसविदे के अनुच्छेद 13 में दिये हुये भाषण-स्वतंत्रता संबंधी अधिकार पर जो प्रतिबंध रखा गया है, उसके औचित्य के संबंध में अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय का एक निर्णय उद्धृत कर देना यहां काफी है। *गिटलो बनाम न्यूयार्क* के मुकदमे में राज-विप्लव के लिये दण्ड से संबंध रखने वाली न्यूयार्क की एक विधि की वैधानिकता का प्रश्न उपस्थित था। उक्त विधि के अनुसार ऐसे भाषण जो भयंकर

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

उथल-पुथल और परिवर्तन उपस्थित करते हों, दण्डनीय थे। इस मुकदमे में फैसला देते हुये सर्वोच्च न्यायलय ने कहा था:

> ''यह एक चिरप्रतिष्ठित मौलिक सिद्धांत है कि विधान द्वारा भाषण एवं प्रकाशन सम्बन्धी जो स्वतंत्रता प्राप्त है, उससे किसी को यह अधिकार नहीं मिलता है कि वह बिना दायित्व के जो चाहे कहे या प्रकाशित कर और न उससे उस बात का अवाध अनियंत्रित अधिकार मिलता है कि लोग स्वतंत्र होकर चाहे जैसी भाषा का व्यवहार करें और इस स्वतंत्रता का दुरुपयोग करने के कारण वे दण्ड के भागी नहीं होंगे।''

इसलिए यह कहना गलत है कि अमेरिका में जो मौलिक अधिकार प्राप्त हैं, वे तो सर्वथा सम्पूर्ण हैं; पर इस मसविदे में जो मौलिक अधिकार दिये गये हैं, वे सर्वथा सम्पूर्ण नहीं हैं।

यह तर्क उपस्थित किया जाता है कि अगर मौलिक अधिकारों के सम्बन्ध में कोई प्रतिबंध अपेक्षित है, तो विधान में ही उस प्रतिबंध का उल्लेख होना चाहिए; जैसा कि अमेरिका के विधान में किया गया है और अगर विधान में इन प्रतिबंधों का उल्लेख नहीं किया जाता है, तो फिर इस बात को न्याय-विभाग पर छोड़ देना चाहिये कि सभी आवश्यक बातों पर विचार कर वही प्रतिबंधों को निश्चित करे। मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि इस प्रकार के तर्कों से लोग अमेरिकन विधान के सम्बन्ध में यदि अपनी अज्ञानता नहीं प्रकट करते हैं, तो उसका गलत स्वरूप अपने सामने रखते हैं। अमेरिकन विधान में ऐसी कोई भी बात नहीं है; केवल एक बात को छोड़कर, यानी असेम्बली के अधिकार के सिवाय मौलिक अधिकारों के सम्बन्ध में, जिनकी कि अमेरिकन नागरिकों को प्रत्याभूति (गारंटी) प्राप्त है, अमेरिकन विधान ने कोई भी प्रतिबन्ध नहीं लगा रखा है। और न यही कहना सही है कि मौलिक अधिकारों के सम्बन्ध में प्रतिबंध रखने का काम अमेरिकन विधान ने न्याय-विभाग पर छोड़ दिया है। प्रतिबंध लागू करने का अधिकार वहां काग्रेस को प्राप्त है। वहां वास्तविक स्थिति उससे भिन्न है जो कि हमारे आलोचकों ने मान रखी है। अमेरिका में विधान ने जो मौलिक अधिकार दिये थे, वे अवश्य ही पहले तो अवाध थे, पर शीघ्र ही कांग्रेस को इस बात का आभास मिल गया कि इन मौलिक अधिकारों के सम्बन्ध में प्रतिबंध रखना नितांत आवश्यक

है। जब वहां सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष इन प्रतिबंधों की वैधानिकता का प्रश्न खड़ा हुआ, तो यह तय पाया गया कि विधान द्वारा अमेरिका की कांग्रेस को इन प्रतिबंधों को लगाने का कोई अधिकार नहीं प्राप्त है; पर सर्वोच्च न्यायालय ने ''पुलिस-अधिकार' के सिद्धांत का आविष्कार किया और मौलिक अधिकार को अवाध मानने वाली विचारधारा का खण्डन इस तर्क द्वारा किया कि प्रत्येक राज्य को पुलिस-अधिकार स्वत: प्राप्त: रहता है और यह आवश्यक नहीं है कि स्पष्ट उल्लेख द्वारा विधान यह अधिकार उसे प्रदान करे। उक्त मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था:

> ''इस बात के सम्बन्ध में कोई प्रश्न नहीं किया जा सकता है कि राज्य अपने पुलिस-अधिकार के प्रयोग में उन व्यक्तियों को दण्ड दे सकता है, जो इस स्वतंत्र्य का दुरुपयोग ऐसे भाषणों द्वारा करते हैं, जो जनहित के प्रतिकूल हैं, जनता के नैतिक स्तर को गिराते हैं, अपरोध को उत्तेजना देते हैं और लोकशांति को बाधा पहुंचाते हैं।''

इस सम्बन्ध में अपने विधान ने जो किया है, वह यह है कि बजाय इसके कि वह मौलिक अधिकारों को प्रतिबंध शून्य रखे और पार्लियामेंट की बचाव के लिये अपने सर्वोच्च न्यायालय पर निर्भर करे कि वह ''पुलिस-अधिकार'' जैसे किसी सिद्धांत का आविष्कार कर उसका बचाव करेगा, उसने मौलिक अधिकारों के सम्बन्ध में प्रतिबंध लागू करने का अधिकार सीधे राज्य को दे दिया है। इन दोनों ही तरीकों से परिणाम में कोई अन्तर नहीं आता। एक प्रत्यक्ष रूप से प्रतिबंध लागू करता है और दूसरा परोक्ष रूप से; किन्तु इन दोनो में से किसी में भी मौलिक अधिकार सर्वथा अवाध नहीं है।

विधान के इस मसविदे में मौलिक सिद्धांतों के बाद ही ''निर्देशात्मक सिद्धांत'' रखे गये हैं ये सिद्धांत परिषदात्मक प्रजातंत्र के लिये निर्मित विधान की एक उल्लेखनीय विशेषता हैं। परिषदात्मक प्रजातंत्र के लिए निर्मित अन्य विधानों में केवल आयरिश स्वतंत्र राज्य के विधान में ही ये सिद्धांत रखे गये हैं। इन निर्देशात्मक सिद्धांतों की भी आलोचना हुई है। यह कहा गया है कि ये सिद्धांत केवल पवित्र घोषणा के ही रूप में हैं। इनमें दायित्व आरोपित करने की शक्ति नहीं है। निश्चय ही यह आलोचना व्यर्थ और अनावश्यक है। स्वयं विधान में यह बात कई शब्दों में कही गई है।

अगर यह कहा जाये कि इन निर्देशात्मक सिद्धांतों के पीछे कानून का कोई बल नहीं है, तो मैं इसे मानने को तैयार हूं। किन्तु यह मानने को मैं कदापि तैयार नहीं हूं कि दायित्व आरोपित करने की इनमें कोई शक्ति है ही नहीं। और

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

न मैं यही मानने को तैयार हूं कि चूंकि इनके पीछे कोई कानूनी बल नहीं है, इसलिए ये व्यर्थ हैं।

ये निर्देशात्मक सिद्धांत उस आदेश-पत्र के समान हैं जो कि 1935 के ऐक्ट के अन्तर्गत, ब्रिटिश सरकार भारत के गवर्नर-जनरल को और उपनिवेशों के तथा भारत के गवर्नरों को जारी करती थी। इस मसविदे में प्रधान को तथा गवर्नरों को ऐसा आदेश-पत्र जारी करने की बात रखी गयी है। इन आदेश-पत्रों की इबारत आप को विधान की चौथी अनुसूची में मिलेगी। जिसे हम निर्देशात्मक सिद्धान्त कहते हैं, वह वस्तुतः आदेश-पत्र का ही एक दूसरा नाम है। अन्तर केवल इतना है कि ये सिद्धांत विधान-मण्डल एवं अधिशासी-वर्ग के नाम जारी किये गये आदेश हैं। मैं तो समझता हूं कि ऐसी व्यवस्था अभिनन्दनीय होनी चाहिए। जहां भी शांति-व्यवस्था एवं उत्कृष्ट शासन के लिए बिना किसी विशेष उल्लेख के अधिकार दिये जाते हैं, यह आवश्यक होता है कि इन अधिकारों के प्रयोग के आनियमन के लिए साथ में आदेश अवश्य हों। विधान में ऐसे आदेशों को शामिल करना जैसे कि प्रस्तुत विधान में प्रस्तावित हैं, एक और कारण से उचित हो जाता है। विधान का मसविदा, जिस रूप में यह है, देश के शासन के लिए केवल एक व्यवस्था मात्र बना देता है। यह किसी दल विशेष को अधिकारारूढ़ करा देने की एक योजना नहीं है, जैसा कि कुछ देशों में किया गया है। अधिकारारूढ़ कौन हो, इस बात का निर्णय जनता पर छोड़ दिया गया है और ऐसा ही होना चाहिए, अगर प्रजातंत्र की कसौटी पर इस व्यवस्था को सही उतारना है। इस व्यवस्था से यह होगा कि चाहे जो भी अधिकारारूढ़ हो जाये, किन्तु विधान को लेकर वह मनमानी नहीं कर सकता। इसके प्रयोग में उसे इन आदेश-पत्रों का जिन्हें हमने निर्देशात्मक सिद्धांत कहा है, आदर करना ही होगा। वह उनकी उपेक्षा कर नहीं सकता। हो सकता है कि इनको भंग करने के लिए उसे किसी अदालत के सामने जवाब न देना पड़े, किन्तु चुनाव के समय निर्वाचकों के समक्ष उसे निश्चय इसका जवाब देना होगा। इन निर्देशात्मक सिद्धान्तों का कितना बड़ा महत्त्व है इस बात का और सही आभास तब मिलेगा जब सच्चाई की शक्तियां अधिकारारूढ़ होने का प्रयास करेंगी।

यह कहना कि इनमें दायित्व आरोपित करने की शक्ति नहीं है, विधान में इनको रखने के विरुद्ध कोई तर्क नहीं है। विधान में ये किस स्थल पर रखे जायें,

इस सम्बन्ध में तो मतभेद हो सकता है। मैं यह मानता हूं कि यह बात कुछ असंगत मालूम पड़ती है कि ऐसी व्यवस्थाएं या धारायें जो प्रतिबंधमूलक नहीं है, वे उन धाराओं के साथ रख दी जाये, जो प्रतिबंध आरोपित करती हों। मेरे विचार से उनका सही स्थान है अनसूची 3ए और 4 में, जिनमें प्रधान तथा गवर्नरों के लिए आदेश-पत्र दिये गये हैं यह इसलिए कि, जैसा मैंने कहा है, ये वस्तुतः अधिशासी वर्ग एवं विधान-मण्डलों के लिए उस हेतु आदेश-पत्र हैं कि वे अपने अधिकारों का प्रयोग किस प्रकार करें। किन्तु इसे कहां रखा जाये, यह तो उपक्रम से सम्बन्ध रखने वाली बात है।

कुछ आलोचकों ने यह कहा है कि केन्द्र बहुत प्रबल हो गया है। औरों ने यह कहा है कि इसे और भी मजबूत बनाना चाहिए। विधान के मसविदे में संतुलन का, बीच का, मार्ग अपनाया गया है। चाहे आप जितना चाहें, केन्द्र को अधिक अधिकार न दिये जाये, पर केन्द्र को प्रबल होने से रोकना कठिन है। आधुनिक जगत में परिस्थितियां ऐसी हैं कि शक्तियों का केन्द्रीकरण आवश्यक हो गया है। इस सम्बन्ध में अमेरिका की संघ-सरकार के विकास पर विचार करना होगा। यह संघ-सरकार, बावजूद इस बात के कि विधान ने इसे बड़ी सीमित शक्तियां प्रदान की थीं, आज अपने मूल स्वरूप से कहीं अधिक बड़ी हो गई है और वहां की प्रादेशिक सरकारों पर बिलकुल छा गई है। आधुनिक स्थितियों के कारण ऐसा हुआ है। यही स्थितियां भारत सरकार पर भी निश्चय ही अपना असर डालेंगी और हमारा कोई भी प्रयास केन्द्र को प्रबल होने से नहीं रोक सकता। दूसरी तरफ केन्द्र को और प्रबल बनाने की जो प्रवृत्ति है, उसे हमें दबाना ही होगा। उतने से अधिक यह ग्रहण नहीं कर सकता, जितने को कि वह सम्भाल सकता है। इसकी शक्ति इसके भार और गुरुत्व के अनुरूप ही होनी चाहिए। अगर हम इसे इतना प्रबल बना दें कि वह अपने ही भार से गिर जाये, तो यह मूर्खता होगी।

इस मसविदे की आलोचना इस बात के लिये भी की गई है कि इसमें केन्द्र और प्रांतों के बीच एक प्रकार के वैधानिक सम्बन्ध की व्यवस्था है। परन्तु केन्द्र और रियासतों के बीच एक भिन्न प्रकार के वैधानिक सम्बन्ध की। रियासतें संघ-सूची में दिये हुए विषयों की सम्पूर्ण तालिका को मानने के लिये बाध्य नहीं है। रक्षा,

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

वैदेशिक मामले, एवं यातायात के अन्तर्गत आने वाले विषयों को ही मानने के लिए ही वे बाध्य हैं। समवर्ती सूची में दिये हुए विषयों को मानने के लिये वे बाध्य नहीं हैं, इस मसविदे में दी हुई राज्य सूची को भी मानने को वे बाध्य नहीं है। उन्हें इस बात की स्वतंत्रता है कि वे अपनी विधान-परिषद् का निर्माण करके अपना विधान खुद बनायें। अवश्य ही यह सभी बातें दुखद हैं और मैं मानता हूं कि इनके पक्ष में कुछ नहीं कहा जा सकता। यह विभेद राज्य की कार्यक्षमता के लिये संकटप्रद सिद्ध हो सका है। जब तक यह विभेद वर्तमान है, अखिल भारतीय मामलों पर केन्द्र का अधिकार सम्भव है, कार्यकर न हो; क्योंकि अगर अधिकार का प्रयोग सभी मामलों में और सर्वत्र न किया जा सके, तो वह अधिकार अधिकार नहीं है। युद्धजनित स्थिति में कुछ इलाकों में अत्यावश्यक अधिकारों के प्रयोग पर ऐसे प्रतिबंधों के कारण राज्य का जीवन ही सर्वथा संकटापन्न हो जा सकता है। इससे भी बुरी बात यह है कि इस मसविदे में रियासतों को अपनी सेना रखने की अनुमति दी गई है।

मैं इस प्रबंध को बड़ा ही हानिकर और विपरीतगामी समझता हूं, जो भारत के ऐक्य को छिन्न-भिन्न कर सकता है और केन्द्रीय सरकार को उलट सकता है। अगर मैं मसविदा-समिति के विचार को रखने में गलती नहीं कर रहा हूं, तो इस व्यवस्था से वह बिलकुल ही सन्तुष्ट न थी उसके सदस्य बहुत चाहते थे कि प्रांतों और रियासतों का केन्द्र से जो वैधानिक सम्बन्ध हो, उसमें एकरूपता हो। किन्तु दुर्भाग्य से इस मामले में सुधार के लिये वे कुछ भी नहीं कर सके। वे विधान-परिषद् के निर्णयों से बंधे थे और विधान-परिषद् उस समझौते से बंधी थी, जो दोनों निगोशियेटिंग कमेटियों के बीच तय पाया था।

परन्तु इस सम्बन्ध में जर्मनी में जो हुआ, उससे हम साहस प्राप्त कर सकते हैं। जर्मन साम्राज्य, जैसा कि बिस्मार्क ने 1870 ई. में उसे स्थापित किया था, एक विमिश्र राज्य था, जिसमें 25 इकाइयां थीं। इन 25 राज्यों में 22 तो राजतंत्रीय थे और शेष 3 गणतंत्रीय नगर-राज्य थे। यह विभेद, जैसा कि हम सबों को ही मालूम है, कालान्तर में चलकर विलुप्त हो गया और समूचा राज्य एक हो गया और सभी निवासी एक हो गये और समस्त राज्य का शासन एक विधान के अधीन

होने लगा। भारतीय रिसायतों के एकीकरण का काम उससे भी शीघ्र समाप्त होने जा रहा है, जितने समय में कि जर्मनी में, यह काम हुआ था। 1947 ई. की 15वीं अगस्त को यहां 600 रियासतें थीं। और आज इन रियासतों के प्रांतों में मिल जाने से अथवा इनके अपने-अपने संघ बना लेने से या केन्द्र द्वारा उन्हें केन्द्र शासित क्षेत्र बना देने से इनकी संख्या केवल 20/30 तक रह गई हैं, जो अपने पांव पर खड़ी हो सकती हैं। यह प्रगति बड़ी तेज हैं। जो रियासतें रह गई हैं, उनसे मैं अपील करता हूं कि वे भारतीय प्रांतों के स्तर पर आ जायें और उन्हीं की तरह भारतीय संघ का पूर्णत: अंग बन जाये। ऐसा करके वे भारतीय संघ को वह बल देंगी, जिसकी इसे आवश्यकता है। ऐसा करने से वे अपनी-अपनी विधान-परिषद् का निर्माण करने तथा अपना-अपना अलग विधान बनाने के झंझट से बच जायेगी और उनके लाभ की किसी भी बात में उन्हें कोई हानि नहीं उठानी होगी। मुझे आशा है कि मेरी अपील व्यर्थ न जायेगी और अपने विधान के पास होने से पहले ही हम प्रांतों और रियासतों में जो अन्तर है, उसे दूर कर देंगे।

कई आलोचकों ने, मसविदे के अनुच्छेद 1 में भारत को, जो राज्यों का संघ बताया गया है, उस पर आपत्ति की है। यह कहा जाता है कि इस सम्बन्ध में सही शब्दावली होनी चाहिये, 'राज्यों का संधान' (Federation of States) यह सच है कि दक्षिणी अफ्रीका जो एकात्मक राज्य है, उसे संघ कहा जाता है। किन्तु कनाडा को भी संघ ही कहा जाता है, पर है वह एक संधान। इस तरह भारत को संघ कहने से यद्यपि उसका विधान संधात्मक है, प्रचलित परिपाटी पर कोई आघात नहीं पड़ता है। परन्तु इस सम्बन्ध में महत्त्व की बात तो यह है कि संघ शब्द का प्रयोग जानबूझ कर किया गया है। कनाडा के विधान में उसे 'संघ' क्यों कहा गया है, यह तो मैं नहीं जानता; पर मसविदा समिति ने इस शब्द का प्रयोग क्यों किया है, यह मैं जरूर बता सकता हूं। मसविदा समिति इस बात को स्पष्ट करना चाहती थी कि यद्यपि भारत एक संधान बनने जा रहा है, पर यह किसी ऐसे समझौते के फलस्वरूप नहीं बन रहा है, जिससे प्रादेशिक राज्यों ने संधान में सम्मिलित हो जाना स्वीकार किया हो। उक्त समिति यह भी स्पष्ट कर देना चाहती थी कि चूंकि संधान किसी ऐसे समझौते के आधार पर नहीं बन रहा है, इसलिये किसी भी राज्य को संधान से अलग होने का अधिकार नहीं है। यह संधान एक संघ है, इसलिये कि वह विनष्ट नहीं हो सकता। यद्यपि शासन की सुविधा के लिये इस देश को और यहां के निवासियों को अलग-अलग राज्यों में बांटा जा

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

सकता है, किन्तु सब मिलाकर देश एक है, इसके निवासी एक हैं और एक शासन के अधीन हैं, जिसको समस्त अधिकार एक ही सूत्र से प्राप्त हुए हैं। अमेरिका वासियों को इस सिद्धांत को स्थापित करने के लिये कि राज्यों को संघ से अलग होने का कोई अधिकार नहीं है और संघ अविनाश्य है, गृह-युद्ध करना पड़ा था। मसविदा समिति ने यही श्रेयस्कर समझा कि प्रारंभ में ही इसे स्पष्ट कर दिया जाये, ताकि भविष्य में इसके सम्बन्ध में कोई विवाद या भाष्य का प्रश्न न उठे।

विधान के मसविदे के आलोचकों ने इसके उन प्रावधानों को जिनका सम्बन्ध विधान के संशोधन से है, बड़ी ही तीव्र आलोचना की है। यह कहा गया है कि मसविदे के इन प्रावधानों से विधान में संशोधन करना बड़ा कठिन हो गया है। यह सुझाया गया है कि ऐसा प्रावधान रखना चाहिये कि कम से कम कुछ वर्षों तक साधारण बहुमत द्वारा विधान में संशोधन किया जा सके। यह तर्क विलक्षण और चातुर्यपूर्ण है। कहा जाता है कि विधान-परिषद् प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर नहीं चुनी गई है, जब कि भविष्य का विधानमंडल प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर चुना जायेगा; किन्तु फिर भी विधान-परिषद् को साधारण बहुमत द्वारा विधान स्वीकार करने का अधिकार प्राप्त है। विधान-मंडल को यही अधिकार नहीं दिया गया है। इस बात का चारों ओर शोर मचाया जाता है कि मसविदे की असंगत बातों में यह एक है। मैं इस दोषारोप का खण्डन करता हूं, क्योंकि यह बिलकुल निराधार है। विधान में संशोधन से सम्बन्ध रखने वाले प्रस्तुत मसविदे के प्रावधान कितने सहज हैं, यह जानने के लिये हमें आस्ट्रेलिया एवं अमेरिका के विधानों के संशोधन सम्बन्धी प्रावधानों को देखना काफी है। इनकी तुलना में वे प्रावधान जो हमारे विधान में रखे गये हैं, बहुत ही सरल हैं रूढ़ि या लोकमत-संग्रह द्वारा इस सम्बन्ध में निर्णय किया जाये, इस विस्तृत और कठिन पद्धति को अपने विधान के मसविदे से हटा दिया गया है। विधान में संशोधन करने का अधिकार केन्द्रीय तथा प्रांतीय विधान-मण्डलों को दिया गया है। विशेष विषयों के सम्बन्ध में ही—और इसकी संख्या बहुत ही कम है—रियासती विधान-मण्डलों का अनुमोदन अपेक्षित रखा गया है। विधान के अन्य सभी अनुच्छेदों के सम्बन्ध में संशोधन का अधिकार पार्लियामेंट केन्द्रीय विधान-मण्डल को दिया गया है। इस सम्बन्ध में एक मात्र प्रतिबन्ध यह रखा गया है कि प्रत्येक आगार (सभा) के वर्तमान एवं मतदान करने वाले

सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से तथा प्रत्येक आगार की सम्पूर्ण सदस्य-संख्या के बहुमत से स्वीकृत होने पर ही संशोधन ग्राह्य होगा। विधान में संशोधन करने का इससे भी कोई सरल प्रावधान हो सकता है, इसका अनुमान करना कठिन है।

संशोधन सम्बन्धी प्रावधानों की कई बातों को जो असंगत कहा गया है, इसका कारण यह है कि विधान-परिषद् की स्थिति को तथा प्रस्तुत विधान के अधीन चुनी जाने वाली भावी पार्लियामेंट की स्थिति को ठीक-ठीक नहीं समझा गया है। प्रस्तुत विधान के निर्माण के पीछे विधान-परिषद् की कोई संकुचित दलबन्दी की भावना नहीं है। एक सुन्दर और सुचारू रूप से व्यवहृत होने योग्य विधान बनाना ही इस परिषद् का उद्देश्य है और इसके अतिरिक्त इसे कोई अपना विशेष अभिप्राय नहीं सिद्ध करना है। विधान के अनुच्छेदों पर विचार करते समय इनकी दृष्टि इस बात पर नहीं थी कि किसी विशेष प्रावधान को पास कराया जाये। भावी पार्लियामेंट अगर विधान-परिषद् के रूप में समवेत हुई, तो इसके सदस्य वहां दलबन्दी की भावना से ही कार्य करेंगे और विधान में ऐसे संशोधन पास करना चाहेंगे, जिनसे वे अपने दल के उन प्रावधानों को स्वीकार करा सकें, जिन्हें पार्लियामेंट से मंजूर कराने में वे इस कारण असमर्थ रहे कि विधान का कोई अनुच्छेद उनकी राह में बाधक होता था। पार्लियामेंट का तो अपना विशेष उद्देश्य होगा, जिसे वह सिद्ध करना चाहेंगी, पर विधान-परिषद्, यद्यपि वह सीमित मताधिकार के आधार पर चुनी गई है, साधारण बहुमत द्वारा विधान पास करे, इस पर तो हम भरोसा कर सकते हैं, पर पार्लियामेंट को साधारण बहुमत द्वारा विधान में संशोधन करने का अधिकार दिया जाये, इस पर हमें चिन्ता हो जाती है; यद्यपि वह प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर निर्वाचित होगी।

मसविदा समिति द्वारा तय किये हुए विधान के मसविदे के विरुद्ध जो भी आलोचनायें हुई हैं, उन सबका, मैं समझता हूं, मैंने जवाब दे दिया है। मैं नहीं समझता कि ऐसी किसी भी आवश्यक आलोचना का उत्तर देना अभी बाकी रह गया है, जो कि गत आठ महीनों के अन्दर हुई हो, जब से कि विधान जनता के सम्मुख आया है। यह निर्णय करना अब विधान-परिषद् का काम है कि वह मसविदा समिति द्वारा तय किये विधान को ही स्वीकार करेगी या इसमें परिवर्तन करके इसे स्वीकार करेगी।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

इस सम्बन्ध में मैं एक बात अवश्य कहना चाहता हूं कि भारत के कई प्रांतीय विधान मण्डलों में विधान पर बहस हुई है और सोच-विचार किया गया है। बम्बई, मध्यप्रान्त, पश्चिमी बंगाल, बिहार, मद्रास एवं पूर्वी पंजाब के विधान मण्डलों ने इस पर बहस और विचार किया है। यह सच है कि कई प्रांतीय विधान मण्डलों ने विधान की अर्थ सम्बन्धी व्यवस्थाओं पर गंभीर आपत्ति की है, तथा मद्रास ने इसके अनुच्छेद 226 पर आपत्ति की है। किन्तु इसके सिवाय विधान के अन्य किसी अनुच्छेद के सम्बन्ध में किसी भी प्रान्तीय विधान मण्डल ने कोई विशेष आपत्ति नहीं की है। कोई भी विधान सर्वथा पूर्ण नहीं हो सकता और इसके अलावा स्वयं मसविदा समिति ने उसे और अच्छा बनाने के लिए कई संशोधनों का सुझाव रखा है। पर प्रान्तीय विधान मण्डलों में इसके सम्बन्ध में जो बहस हुई है, उसके आधार पर मैं यह कहने का साहस कर सकता हूं कि प्रस्तुत विधान, जैसा कि मसविदा समिति ने इसे स्थिर किया है, इस देश के कार्यारम्भ के लिए काफी अच्छा है: मैं ऐसा समझता हूं कि प्रस्तुत विधान व्यवहार योग्य है। यह लचीला है और इतना सबल है कि युद्ध एवं शांति दोनों ही समय में देश को एक सूत्र में बांधे रख सकता है। मैं यह कहूंगा कि यदि नवीन विधान के अंतर्गत कोई गड़बड़ी पैदा होती है, तो इसका कारण यह नहीं होगा कि हमारा विधान खराब था, बल्कि यह कहना चाहिए कि अधिकारारूढ़ व्यक्ति ही अधम था, नीच था। अध्यक्ष महोदय, इन शब्दों के साथ मैं प्रस्ताव करता हूं कि इस पर विचार किया जाये।

***अध्यक्ष:** मौलाना हसरत मोहानी ने एक संशोधन की सूचना दी है, वह आज प्रात:काल साढ़े ग्यारह बजे प्राप्त हुई है। मैं उसे पेश करने की आज्ञा विशेष कर इस कारण से दूंगा कि यदि वह स्वीकार नहीं किया गया, तो फल यह होगा कि वह दूसरा प्रस्ताव भी रुक जायेगा, जिसकी मुझे सूचना मिली है। मौलाना साहब, क्या आप कृपा कर अपना संशोधन पेश करेंगे।

मौलाना हसरत मोहानी: जनाब वाला, मैंने जिस तरमीम का नोटिस दिया है, वह यह है कि यह कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली, जो इस वक्त मौजूद है, यह काम्पीटेंट नहीं है और इसकी तीन वजह हैं, जिनकी बिना पर मैं इसको काम्पीटेंट नहीं समझता हूं। पहली सबसे बड़ी वजह तो यह है...

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): अध्यक्ष महोदय, क्या मौलाना साहब सर्वप्रथम संशोधन पढ़ने की कृपा करेंगे?

***अध्यक्ष:** मैं उस संशोधन को पढ़ दूंगा। संशोधन यह है:

कि

''विधान वे मसौदे पर तब तक विचार स्थगित किया जाये, जब तक कि संयुक्त निर्वाचन के आधार पर नई तथा अधिकार सम्पन्न विधान-परिषद् का चुनाव न हो जाये और भारत में साम्प्रदायिक दलों की जगह राजनैतिक दलों का निर्माण न हो जाये।''

यही संशोधन है।

***श्री बी. दास:** श्रीमान् जी, क्या मैं एक औचित्य प्रश्न उपस्थित कर सकता हूं? मेरा औचित्य प्रश्न यह है कि मौलाना साहब कोई निषेधात्मक संशोधन पेश नहीं कर सकते हैं...

***अध्यक्ष:** क्या आप उनको संशोधन पेश नहीं करने देंगे?

***श्री बी. दास:** उन्होंने अभी हिंदुस्तानी में जो कुछ कहा, उसका आशय यह था कि उन्होंने संशोधन पेश कर दिया है। यह सभा की प्रणाली के विरुद्ध है। मेरे विचार से यह नियम-विरुद्ध है और इसको पेश नहीं करने देना चाहिये।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से यह अच्छा होगा कि मौलाना साहब को संशोधन पेश करने दिया जाये। उसके पश्चात् आप औचित्य प्रश्न उठा सकते हैं।

मौलाना हसरत मोहानी: मैंने यह अर्ज किया था कि मैं किस वजह से इस मौजूदा कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली को काम्पीटेंट नहीं समझता हूं। सबसे पहली वजह यह है कि कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली तमाम दुनियां में जहां कहीं कायम हुई है, वहां पर वह रैवुलूशन के बाद हुई है।

रैवुलूशन के मानी कोई आर्म रैवुलूशन के नहीं है; बल्कि यह कि एक सिस्टम आफ गवर्नमैंट जो जारी था, वह सब सिस्टम वहां से हट गया, तो वहां एक दूसरा सिस्टम कायम करने के लिए और उसको पास करने के लिए एक कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली बुलाई गई है; ताकि वह नये सूरत हाल के मुताबिक अपना कान्स्टीट्यूशन बनावे। अगर पहले से जो हुकूमत जारी थी, वही बाकी रहे, तो कान्स्टीट्यूयेंट असेम्बली की जरूरत भी नहीं रहती। हमारा जो ड्राफ्ट कान्स्टीट्यूशन

[मौलाना हसरत मोहानी]

डॉ. अम्बेडकर साहब ने पेश किया है, इसमें आप देख लीजिये कि यह चीज मौजूद नहीं है। उन्होंने ज्यादातर यही किया है कि गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट 1935 की नकल कर रखी है, या जैसा कि उन्होंने खुद कहा है, मुख्तलिफ मुल्कों के कान्स्टीट्यूशनों से, कुछ यहां से और कुछ वहां से लेकर। 'कहीं की ईंट और कहीं का रोड़ा, भानवती का कुनबा जोड़ा' यह क्या है। यह सूरत हमारे अम्बेडकर साहब ने कायम की है। मुझको सबसे बड़ी शिकायत इस सिलसिला में यह है कि अगर इनको यही करना था कि दूसरे मुल्कों के कान्स्टीट्यूशन की नकल करके अपना कान्स्टीट्यूशन मुरत्तब करना था, तो मैं यह कहता हूं कि when you had to embody why should you not embody the latest and best constitution? आपने तमाम दुनियां को तो देखा। आस्ट्रेलिया का कान्स्टीट्यूशन देखा, कनाडा का कान्स्टीट्यूशन देखा और इंग्लैंड का कान्स्टीट्यूशन देखा, लेकिन आपको सोवियत यूनियन का कान्स्टीट्यूशन नजर नहीं आया। मैं यह कहता हूं कि आपने जितनी बातें अभी अपनी तकरीर में बयान की हैं, मैंने इन सबको नोट कर लिया है। इस वक्त इनका तफसील के साथ जवाब देने का मौका नहीं है। लेकिन मैं यह कह सकता हूं कि आपने जितनी-जितनी खराबियां पाई हैं वह आपने रख ली हैं। आपने कहा है कि rigidity और legality नहीं होना चाहिए, लेकिन क्या कहीं आपने कहा है कि Unitary System of Govt. होना चाहिए। कहीं यह कहा है कि हम village को नहीं कर सकते हैं। अगर सोवियत कान्स्टीट्यूशन को अपने सामने रखकर काम करते तो इसमें कोई दिक्कत पैदा नहीं होती। यह मेरा दावा है और मैं इस बात पर आपको चैलेंज देता हूं। आपने जो मिसाल के तौर पर यह कहा है कि जब तक कि Unitary System of Govt. न हों, और Centre को कोई पावर न हो, उस वक्त तक हम कोई काम नहीं कर सकते हैं। यह एक फिजूल बात है। आपको मालूम नहीं है कि सोवियत कान्स्टीट्यूशन जो है, इसमें यह किया गया है। आपने तो यह किया है कि कुछ चीजें प्रोविन्सेज में रख दी है, कुछ चीजें सैन्टर में और कुछ शामिल रख दी हैं। सोवियत में यह किया है कि अपने हर constituent को मुस्तकिल रिपब्लिक बना दिया है और सबसे बड़ी चीज यानी डिफेन्स को भी उन्होंने to win the confidence of their constituent units इनको दे दिया है। Foreign relations, Defence, Communications का भी इनको हक दे दिया है। नतीजा इसका क्या हुआ? आप तो कहते हैं कि इससे खराबी पड़ेगी, लेकिन उन्होंने इससे अपनी States की

confidence हासिल करनी है। तो इसका नतीजा यह हुआ कि सोवियत यूनियन के तमाम हिस्सा में अगर आप वहां के वाशिन्दों का लिहाज करें, तो वह मुसलिम republics है। इनमें से हर एक ने लड़ाई में अपनी पूरी कुब्बत के साथ मदद दी। काकेशिया और जहां कहीं भी लड़ाई हुई है, वहां हर सख्श ने सोवियत यूनियन का साथ दिया है। कोसैक्स वगैरह सब लोग इस यूनियन ही के वाशिन्दे थे, जिन्होंने मदद दी। तो आपका यह कहना बिलकुल बेजार है और आप लोगों को confidence में नहीं लेते हैं और कहते हैं कि साहब सब को merge होना चाहिए।

***श्री बालकृष्ण शर्मा:** क्या मैं एक औचित्य प्रश्न उपस्थित कर सकता हूं? आदरणीय मौलाना साहब विधान के गुणों का वर्णन कर रहे हैं, परन्तु हमारे सामने जो प्रस्ताव उपस्थित किया गया है, वह यह है कि हम इस विधान पर विचार न करे। सभा के समक्ष विधान के गुणों का वर्णन नहीं किया जा सकता, जब कि हमें केवल वाद-विवाद के स्थगित करने के प्रश्न पर ही विचार करना है।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से यदि आप उनको (मौलाना साहब को) स्वतंत्र बोलने दें, तो समय की बचत होगी।

मौलाना हसरत मोहानी: मैं इसको अर्ज कर रहा हूं। मैंने जो कहा है कि यह काम्पीटैंट नहीं है, तो इसकी वजह यह है कि आपने तमाम दुनियां के कान्स्टीट्यूशन तो देखे, लेकिन जो दुनियां का लेटेस्ट एण्ड बैस्ट कान्स्टीट्यूशन है, उस पर नजर नहीं की। दूसरी बात यह है कि हमारी कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली का इलेक्शन किसी तरीके पर हुआ था। यह कोमिनल वैसेज पर हुआ था। मुसलमानों को मुसलमानों ने चुना और हिन्दुओं को हिन्दुओं ने। और स्टेट्स इसमें दाखिल ही नही थी। आप की जो पहली कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली की मीटिंग हुई थी, उसमें क्या हुआ? उसमें तीन पार्टीज थीं, इसको आप खुद मानते हैं। कांग्रेस, मुसलिम लीग और स्टेट्स। इसमें स्टेट्स तो उस वक्त तक नहीं आई थीं। मुसलिम लीग का भी कोई सदस्य शरीक नहीं हुआ। नतीजा यह हुआ है कि आपने जो कान्स्टीट्यूशन बनाया है, वह एक पार्टी ने बनाकर रख लिया। आप इसको कैसे दूसरों के ऊपर लागू कर सकते हैं? मेरे कहने का मतलब यह है कि आपके इस कान्स्टीट्यूशन से हम क्या उम्मीद करें; क्योंकि यह तो महज एक पार्टी का बनाया हुआ है। अब जो सूरत पैदा हो गई है, उसमें भी यह ही है। सिर्फ एक

[मौलाना हसरत मोहानी]

पार्टी है। वह इस तरह है कि मुसलिम लीग तो खत्म हो गई। उसने अपने आपको डिजोल्व कर लिया और जितनी स्टेट्स थीं, वह सब मर्जर होकर इन्डियन गवर्नमेंट में शरीक हो गई और सिर्फ अब यह इन्डियन गवर्नमेंट यानी एक पार्टी रह गई है, जिसके लिए हमको पोलिटिकल पार्टियां बनानी पड़ीं। इस तरह से आपकी दशवारियां खत्म हो जायेंगी...

श्री सत्यनारायण सिन्हा: कोई बेहतर पहलू निकला या नहीं?

मौलाना हसरत मोहानी: वही मैं कहने जा रहा हूं। अभी डाक्टर अम्बेडकर साहब ने कहा कि मैजोरिटी पार्टी को मैनोरिटी पार्टी का लिहाज रखना चाहिए। मैं कहता हूं: We do not want them आपने कान्स्टीट्यूशन में रखा है कि मुसलमानों के लिए 14 फीसदी सीट्स रिजर्व रखी जाये। आप जब तक यह समझते हैं कि आप 86 फीसदी है और मुसलमान 14 फीसदी है। यह जब तक आप में कम्युनिज्म है, उस वक्त तक कुछ नहीं हो सकता। आप मुसलमानों को मैनोरिटी में क्यों कहते हैं? मुसलमान मैनोरिटी में उस वक्त तक हैं, जब तक आप इनको कम्युनियल शक्ल में पेश करें। जब तक पोलिटिकल पार्टी के तौर पर या फर्ज कीजिये कि हम इन्डिपैन्डेंट कम्युनिस्ट के तौर पर या सोशलिस्ट के तौर पर आयेंगे और जब कि कोलिसन पार्टी बनायेंगे, तो वह 'ऐज ए होल' सबके मुकाबले में होंगे।

आप कहते हैं कि इतना जमाना गुजर चुका, इतनी बातें गुजर चुकीं, हमने इतनी मेहनत कर ली है। मैं जनाब सदर, आपको याद दिलाऊंगा कि जब पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कान्स्टीट्यूशन का मसौदा पेश किया था, उस वक्त मैंने ऐतराज किया था। उन्होंने कहा था कि कोई हर्ज नहीं है। आप प्राइमरी चीज को छोड़ दीजिये। मैंने कहा था कि यह कौन लग़ो बात है कि जो चीज पहले तय करना चाहिये, उसको आप छोड़ देते हैं। कि आप एक ताकतदार और मजबूत बात नहीं कर सकेंगे। बल्कि इधर-उधर की लग़ो बात हर एक काम में भर देंगे। आया जब यह सवाल होगा इन चीजों के मुतल्लिक, तो फिर आप क्या कर सकेंगे? यानी

आपने कोई फैसला नहीं किया और कान्स्टीट्यूशन बनाने बैठ गये। इट इज फ्यूटीलिटी (it is futility)।

आपको यह देखना चाहिए कि हमको क्या बनाना चाहिये। हम एक तस्वीर बनाना चाहते हैं। अगर यह तस्वीर ठीक तौर से न हो, तो वह तस्वीर नहीं कही जा सकती। आप कहेंगे कि हमने इतनी मेहनत कर ली है और इतने दिन गुजर गये हैं, तो मैं कहूंगा कि इसमें दुशवारी की कौन सी बात है। और कोई खतरा नहीं है। मैंने उस वक्त भी प्रौटेस्ट किया था और मुझको खुशी है कि उस वक्त मेरे साहब सदर ने कहा था कि इस पर गौर किया जायेगा। और उस बिना पर हमने इस रैज्यूलशन पर बहस की थी। आप देखते हैं कि पाकिस्तान में भी यही हुआ है और जिन्ना साहब ने कहा था कि जब तक कान्स्टीट्यूयेंट असेम्बली इलैक्ट नहीं होगी, उस वक्त तक कान्स्टीट्यूशन पास नहीं हो सकता। इस लिहाज से मैं कहूंगा कि जब तक आप नान-कम्युनिल वैसेज पर कान्स्टीट्यूयेंट असेम्बली का इन्तखाब न करें, आपको कोई हक नहीं है कि आप कान्स्टीट्यूयेंट असेम्बली से कान्स्टीट्यूशन पास करा लें। आप इस ज़ोम में किसी बात को कुछ नहीं समझते कि आपकी मैजोरिटी है। आप जो चाहेंगे, पास कर लेंगे। आप यह न समझिये कि आप पर कुछ इल्जाम न आयेगा। मैं अकेला जो कुछ कह सकता हूं, कहता हूं। आप न मानिये। आप तो दरअसल वही कर रहे हैं कि जो ब्रिटिश गवर्नमेंट करती थी। उसने कुछ दिनों के बाद पेंशन दे दी और कहा कि घर बैठो। क्यों साहब, क्यों घर बैठें?

मैं आपसे पूछना चाहता हूं कि आप हैदराबाद में क्या कर रहे हैं? वहां के लिए आप कहते हैं कि वहां एक कान्स्टीट्यूयेंट असेम्बली बिठाई जायेगी और वहां का आईन बनायेगी। वहां तो यह चीज आपने मंजूर कर ली है। आखिर यहां ऐसा क्यों नहीं करते? इसके मानी साफ यह हैं कि यह सब कम्युनियल लाइन पर हो रहा है और जिसमें हक व इन्साफ को कोई दखल नहीं है।

अगर आप कहते हैं कि हम नहीं कर सकते। हमको अख्तियार नहीं है कि हम कान्स्टीट्यूयेंट असेम्बली का ज्वाइंट अलैक्टिरेट पर इलैक्शन करें। जब कान्स्टीट्यूशन बन जायेगा, तो होगा। मैं वही बात कहता हूं, जो आपने कही है

[मौलाना हसरत मोहानी]

कि रिजिडिटी और लिगेलेजम को छोड़ दीजिये। मैं आपसे पूछता हूं कि क्या आप बगैर निजाम के फरमान के हैदराबाद में कान्स्टीट्यूयेंट असेम्बली कायम कर सकते हैं? लेकिन चूंकि आप को जरूरत महसूस हुई, इसलिये आपने अपने यहां कान्स्टीट्यूयेंट असेम्बली का इलैक्टोरेट बनाना शुरू कर दिया। यह कहना कि हम कर नहीं सकते, ठीक नहीं। ''Where there is a will there is a way'' अगर आप चाहते हैं कि मुल्क के साथ इन्साफ करें और सब के साथ एक सा बर्त्ताव करें, तो मैं आपको वार्निंग देता हूं कि यह कोशिश कि हम सबको मिलाकर एक कर लें और एक परमानैंट इन्डियन पावर बना लें, यह आपको तबाही की तरफ ले जायेगी। लेटेस्ट मिसला मौजूद है। हमारे एम्परर औरंगजेब की। उसने यह किया कि सारा हिन्दुस्तान फतह करने के बाद आखिर में हिन्दुस्तान के जनूब में वह दो रियासतें बीजापुर और गोलकुंडा की थीं, उनको भी फतह किया; ताकि एक Unitary Moghal Empire कायम हो जाये। नतीजा क्या हुआ? लोग कहते हैं कि औरंगजेब की सल्तनत तहस्सब की वजह से गई। मगर मैं कहता हूं कि उसकी सल्तनत इम्पीरियलिज़्म (Imperialism) के तखैयुल की वजह से गई। अगर वह यह न करता तो सल्तनत न जाती। आप यह आसान न समझिये कि सबको मिलाकर और मजबूर करके अपने तखत में एक युनेटरी गवर्नमेंट कायम कर लेंगे। यह नहीं चलेगी। आप फ्रेश इलेक्शन कीजिये। नौन-कम्युनिल बेसेज पर कीजिये, ज्वाइंट इलेक्टारेट पर कीजिये और उसके बाद जो कान्स्टीट्यूशन आप बनायेंगे, उसको हम मंजूर करेंगे और जो कान्स्टीट्यूशन आपने बनाया है हम तो उसको इस काबिल समझते हैं कि उसे रद्दी की टोकरी में फेंक दें।

***श्री बी. दास:** मैं यह बताना चाहता हूं कि नियम (31) उप-खंड (2) के अंतर्गत भारतीय विधान के मसौदे पर विचार करने के लिये माननीय डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव को स्थगित करने के प्रस्ताव को पेश करने की आज्ञा अध्यक्ष को नहीं देनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** मैंने इसे नियम 25, खंड 5, उप-खंड (बी) के अंतर्गत मसौदे पर विचार करने के प्रस्ताव को, जिस पर वाद-विवाद हो रहा है, स्थगित करने वाले प्रस्ताव के रूप में लिया है।

***श्री बी. दास:** परन्तु वे (मौलाना साहब) तो देश में सर्वप्रथम नये चुनाव कराना चाहते हैं। यह तो उक्त विचार के सर्वथा विरोध में है।

***अध्यक्ष:** मैंने उदारतापूर्वक नियम की व्याख्या की है, क्योंकि जैसा मैंने कहा है, मैंने नियम 25, खंड 5, उप-खंड (बी) के अंतर्गत उसे लिया है।

***बेगम ऐज़ाज रसूल** (संयुक्तप्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान् जी, आज की बैठक के स्थगित होने से पूर्व क्या मैं यह जान सकती हूं कि डा. अम्बेडकर के प्रस्ताव पर सामान्य वाद-विवाद के लिये कितने दिन देने का आपका विचार है?

***अध्यक्ष:** जैसा कि अभी मुझे बताया गया है, यह आशा की जाती है कि कल वाद-विवाद समाप्त हो जायेगा। मैं प्रत्येक वक्ता के लिये समय नियत कर दूंगा और यदि वाद-विवाद को और बढ़ाने के लिये मुझे यथेष्ट मत प्रतीत होगा, तो और समय दे दिया जायेगा।

इसके बाद सभा शुक्रवार 5 नवम्बर सन् 1948 ई. प्रात: 10 बजे तक के लिये स्थगित हुई।